चार अध्याय

(मूल बँगला से अनूदित)

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-६

यह 'चार अध्याय'

जिस प्रकार हिन्दी-साहित्य मे प्रसाद का कविरूप उनके कथासाहित्य मे भी अपनी विशिष्टता को नही छिपा पाता, रवीन्द्र के कथासाहित्य मे भी कथाकार की अपेक्षा कवि का स्वरूप मुख्य रूप से मुखरित है। काव्य का तात्पय अलकरणयुक्त शब्द-समन्वय नही, प्रत्युत अन्तर्मन की सूक्ष्मातिसूक्ष्म अभिव्यक्ति है। चरित्र की बाहरी साज-सज्जा कलाकार को विश्राम नही देती। वह पात्र के तलदेश मे प्रविष्ट होकर उसके गोपन जगत को बाहर निकालता है। कवि पुन आदर्शो का सेवक होता है। यथाथ जगत् की युगान्तकारी आँच से ऊब कर कल्पना-नन्दन-कानन मे अपनी अमूत अभिलाषा को आदश के साचे मे ढाल कर विश्वास की आलौकिक भूमिका प्रस्तुत करता है। अत रवीन्द्र के कथासाहित्य के रस ग्रहण करने के लिए पाठक को साहित्य के ताने-बाने मे अपना विलयन कर देना पडता है।

प्रस्तुत लघु उपन्यास रवीन्द्र की प्रौढ लेखनी की देन है। उनके समस्त विचार, आदर्श, आस्था, दशन थोडे मे ही, पात्रो के चरित्र एव कथोपकथन के माध्यम से अभिव्यञ्जित हो गये हैं। प्रत्येक मुख्य पात्र के चरित्र का विकास सस्कार, प्रतिक्रिया, सकल्प एव साधन के सोपानो पर होता है। सिद्ध-विवेचना के लिए छोड दी जाती है क्योकि सृष्टि के अमूत मे साधना एव सिद्ध मे कोई भेद नही दिखाई पडता। सस्कार पारिवारिक एव सामाजिक है। उसके अनुकूल उपादान निर्विरोध ग्रहण कर लिये जाते है किन्तु प्रतिकूल उत्पादनो के विरुद्ध प्रतिक्रिया पन-

पती है। यही प्रतिक्रिया चरित्र से सम्बद्ध हो जाती है। विवेक विवेचना की परिधि के विचार के साथ-साथ प्रतिक्रिया का आयतन भी बढने लगता है। यह प्रतिक्रिया सकल्प की ओर प्रेरित करती है। किन्तु सामाजिक आधार-शिला पर व्यक्ति स्वतन्त्र नही, वह सामर्थ्यवानो के हाथ की कठपुतली न जाता है। उसकी समस्त मौलिक समवेदनायें अन्ध विश्वास के सामने लुप्त हो जाती है। व्यक्ति का मूल्य समाप्त हो जाता है, वह दल-चक्र का एक आरा मात्र रह जाता है जिसे धुरी के स्थिर रहने पर विश्वास मिलता है। धुरी के स्पन्दित होते ही वह उसके चतुर्दिक नाचने लगता है। अतएव सकल्प की प्रेरणा भावुकता मिलती है जो व्यक्ति का प्रकृत रूप नही। सकल्प के बाद साधना प्रारम्भ होती है जो सकल्प के विकृत होने पर विकलाग दिखाई पडती है। उपन्यास की नायिका एला की प्रतिक्रिया का मूल परिवार मे है। इन्द्रनाथ की प्रतिक्रिया समाज की शासन-व्यवस्था मे प्रतिफलित अन्याय से होती है। उसकी वज्ञानिक प्रतिभा का सदुपयोग नही हुआ और उसकी अपार चारित्रिक शक्ति ने आतकवादी प्रतिक्रिया को उकसाया। अतीन रूप के द्वन्द्व मे पडकर प्रतिक्रियावादी बना। एला की अपूर्व सौन्दय-राशि ने उसे मुग्ध किया वह भ्रमर की तरह रूप-सुधा पाने के लिए लालायित हो उठा। किन्तु इसके अभिजात्य सस्कार ने यौवन की दानवी भूख का दमन किया। प्रतिक्रिया के अनुसार एला का उद्देश्य था नारी-जाति का कुण्ठित अवगुठन से उद्धार करना। इन्द्रनाथ का उद्देश्य था विदेशी शासन-सत्ता को नीचा दिखाना। अतीन का उद्देश्य था एला के अन्तरतम को समझ कर उसके साथ सायुज्य हो जाना। किन्तु साधना मे वे स्वतन्त्र

न रहे। प्रत्येक की मौलिकता इन्द्रनाथ के क्रूर आतकवादी सकल्प के सामने चूर चूर हो गई।

पूर्णता नि शब्द रहती है। अभिप्रेत की उपलब्धि साधक को मुखरित होने से रोकती है। अतएव पूण एव अभिप्रेत को लेकर मस्तिष्क के गोपन तल-प्रदेश की छान बीन नही की जा सकती। अत साधना मे स्वतन्त्रता का अभाव पाकर चरित्र का परमाणु सहस्त्रधा बँट जाता है, कल्पना एव कार्य, आदर्श एव यथार्थ, सूक्ष्म एव स्थूल कर्त्तव्य एव अकर्त्तव्य मे द्वन्द्व छिड जाता है। चरित्र का स्थिर चक्र नाचने लगता है और गति के भीतर उसका सच्चा रूप दिखाई पडता है। किन्तु अन्त मे यह दिखाई पडता है कि व्यक्ति का अपना स्वरूप सर्वाधिक प्रिय है। उस विमल रूप मे पशुता छलाग नही मारती, मगलमय मानव अपनी कल्याण साधना द्वारा मानव-कल्याण मे रत दिखाई पडता है। समस्त मानवोय भावनाओ के ऊपर प्रेम का अटल साम्राज्य है। विज्ञान एव दशन दोनो एक-दूसरे के पूरक हो सकते हैं। शर्त यह है कि विज्ञान अपनी निर्धारित सीमा को सब कुछ न मान बैठे और दशन नीचे उतर कर भौतिक यथाथ के निरीक्षण से न हिचकिचाये। ऐसा होता तो इन्द्रनाथ और अतीन एक दूसरे के पूरक बनते और सयोजिका बनती एला। किन्तु सारा विघटन व्यक्तिगत स्वातन्त्र्य के अपहरण के कारण होता है।

उपर्युक्त मूल तत्व का भारतीय परिवार, समाज, रङ्ग, ध्वनि आदि के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है। कही अभावग्रस्त चाय की दुकान है तो कही भूतो का अडडा। धान की खेती की हरियाली एक तरफ आकृष्ट करती है। तो दूसरी तरफ शून्य (श्मशान) की विभीषिका आतकित कर देती है।

बीच-बीच मे मर्यादित आलिंगन एव चुम्बन स्थल विशेष पर पवित्र प्रेम का ही उद्रेक करते हैं। ईर्ष्या, क्रोध, व्यङ्ग, हास्य, करुणा, भर्त्सना, उपालम्भ आदि सभी मानसिक उपादानो के साथ पूर्ण न्याय किया गया है।

भावुकता की लहर पर आरूढ होकर उपन्यासकार कभी २ इतनी ऊँचाई पर चढ जाता है कि सामान्य जीवन से असम्बद्ध हो जाता है। किन्तु वहाँ भी सन्तोष है। क्लिष्ट विश्लेषण की कटुता सौन्दय एव पौरुष की मनोरम मूर्त्तियो से छिप जाती ह। वतमान धोखा है पर यथार्थ है, सरल है, गाह्य है। अतीत क प्रति उपन्यासकार की विशेष ममता है, वह कभी-कभी सामान्य ग्रहण से दूर भागता है किन्तु एक भावना काम करती रहती है कि विध्वंश एव पराभव के लिए जहाँ एक तरफ वह विराट अक का काम करता है तो दूसरी ओर इतिहास की सीढियो पर सिंह-गजना कर जागृति की लहर भी दौडाता है। अतीत वतमान का प्राण है भविष्य आशा की निर्मल शीतल चाँदनी छिटकाता है जिसमे आदश विलास करता है। मृत्यु लेखक के लिए पलायन का पथ नही, प्रत्युय कम की शाश्वत प्रेरणा है, तीनो काल प्रेम की अमृत बूद पर समन्वित होने के लिए विकल हैं।

अनुवाद के सम्बन्ध मे

अनुवाद आखिर अनुवाद ही है किन्तु इतना अवश्य है कि केवल शब्दो के पीछे यत्नवत् न भागकर भावना के निर्मल सरोवर मे अवगाहन भी किया गया है। फिर भी अनुवाद अपनी शास्त्रीय रीति पर प्रतिष्ठित है। न तो रबर की तरह बढाने की चेष्टा ही की गयी है और न रुई की तरह सकुचित करने की। अत,

इसे पवित्र एव निष्कलक समझकर विशुद्ध साहित्यिक अनुसधानो के उपयोग मे भी लाया जा सकता है।

आखिर गलतियाँ भी स्वाभाविक ही हैं। वङ्गला से हिन्दी मे अनुवाद करते समय सबसे अधिक परेशानी होती है छाया दोष को मिटाने मे। यो तो अनुवाद के बाद पाठक की दृष्टि से अवलोकन कर प्रकृत रूप देने का पूर्ण प्रयास किया गया है फिर भी दोष का रह जाना स्वाभाविक ही है। ऐसे दोषो के सम्बन्ध मे प्रमाणित निर्देश सहर्ष ग्राह्य होगे और अगले सस्करण मे सुधारने का अवसर मिलेगा।

—अनुवादक

भूमिका

एला स्मरण करती है अपना अतीत—विद्रोह मे पला हुआ वह शैशव—जीवन का प्रभात। उसकी माँ मायामयी झक्की स्वभाव की थी। कढी मे कब उबाल आयेगा, किसी को पता नही रहता था। उनका व्यवहार विचार-विवेचना की सीधी राह पर नही चल सकता था, वे जब-तब, बिना लगाम के घोडे की तरह घर गृहस्थी को अशान्त बना डालती थी। शासन करती थी अन्यायपूर्वक, सन्देह करती थी बिना कारण। बेटी जब अपनी गलती कबूल नही करती तो वे झट बरस पडती। 'झूठ बोलती हो।' तब भी एला को जैसे बिना नमक-मिर्च लगाये सच बोलने का व्यसन-सा हो गया था। इसीलिये तो उसे सजा मिली है सबसे अधिक। किसी भी प्रकार के अन्याय को वह सहन नही कर पाती है। किन्तु इस स्वभाव विशेष को माँ ने सदा ही नारी-धर्म के प्रतिकूल समझा है।

एक बात वह बचपन से ही जानती है कि दुर्बलता अत्याचार को प्रश्रय देती है। उसके परिवार मे जितने निरीह टुकड-खोर थे, जो दूसरो के रहम और कृपा की तग चहारदीवारी के भीतर बन्द थे, उन्होने ही उसके परिवार की आबहवा मे गन्दगी घोली थी और उसकी माँ के अन्ध-प्रभुत्व को निरकुश बना डाला था। ऐसी अस्वस्थ स्थिति के प्रतिक्रिया-रूप मे उत्पन्न स्वाधीनता की अदम्य आकाक्षा बचपन से ही उसके मन को आन्दोलित करती आ रही थी।

एला के पिता नरेशदास गुप्त ने किसी विलायती विश्वविद्यालय मे मनोविज्ञान की ऊँची डिग्री पाई थी। उनकी वैज्ञा-

निक विचार शक्ति तीक्ष्ण थी तथा अध्यापन मे उन्होने विशेप-रूप से ख्याति प्राप्त की थी। इस प्रान्त के एक प्राइवेट कालेज मे नौकरी करना कबूल किया था क्योंकि इसी प्रान्त मे उनका जन्म हुआ था। सासारिक उन्नति की उन्हे कोई विशेप कामना नहीं थी। इसमे वे निपुण भी नही थे। वे लोगा पर अन्धविश्वास करते थे, धोखा खाते थे, फिर भी उनकी आदत ज्यो-की-त्यो बनी रहती थी। जो धोखे से या अनायास ही उपकृत होते है, उनको कृतघ्नता सबसे अधिक मर्माहत करती है। जब उनको इसका पता चलता था तब वे कृतघ्न को मनोविज्ञान के किसी विशेप तथ्य के अन्तर्गत शामिल कर लेते थे। मन-ही मन अथवा खुल कर उसकी शिकायत नही करते थ। सासारिक भूलो के लिए उनकी पत्नी ने उन्हे कभी भी माफ नही किया, बल्कि उसका तिरस्कार करती रही, अभियोग का कारण पुराना पड जाने पर भी उनकी पत्नी भूलती नही थी तथा गडे मुर्दे उखाड कर उनकी खोपडी खाती रहती थी। अपनी विश्वासपराणयता तथा उदारता के कारण बार-बार ठगे जाते तथा दु ख पाते देख कर एला अपने पिता के प्रति उसी प्रकार का स्नेहभाव रखती थी जिस प्रकार माता अपने भोले-भाले शिशु के प्रति रखती है। सबसे अधिक आघात उसे उस समय पहुँचता, जब माँ की कलह की भापा मे यह तीव्र इगित रहता था कि बुद्धि विवेक की दृष्टि से वे अपने पति की अपेक्षा श्रेष्ठ हैं। एला ने अनेक अवसरो पर माँ द्वारा पिता को अपमानित होते देखा है। इस बात के प्रति निष्फल क्रोध के कारण रात मे आँसू से उसका तकिया भीग जाता था। इस प्रकार के आत्यन्तिक धैर्य को अन्याय करार देकर एला ने मन-ही-मन अपने पिता को भी कम अपराधी नही समझा है।

अत्यन्त पीडित होकर एला ने एक दिन अपने पिता से कहा, 'इस प्रकार चुपचाप अन्याय को सहना भी कम अन्याय नही है।'

नरेश ने कहा, 'किसी के स्वभाव का प्रतिवाद करना ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार गम लोहे को हथेली पर रखकर ठण्डा करना। इससे बहादुरी का सेहरा भले ही मिल जाये, परन्तु आराम नही मिलता।'

'चुपचाप रहने मे आराम और भी कम है।' कहकर एला जल्दी से चली गई।

इधर गृहस्थी मे एला देखती थी कि जो माँ के अनुसार चलने मे कुशल थे, उनकी गलतियो की सजा निरपराधो को भुगतनी पडती थी। एला इसे बर्दाश्त नहीं कर पाती, उत्तेजित होकर विचारकर्त्तव्य के सामने सबूत देती थी। किन्तु कर्त्तव्य के अभिमान के समान पक्की दलील भी कारगर नही होती और उसमे बदला लेने की दुर्बल प्रवृत्ति देखी जाती है। वह अनुकूल आधी के वेग की तरह विचार की नौका को आगे नहीं बढाती बल्कि टेढी कर देती है।

इस परिवार की एक और विशेपता थी जिसने एला के मन पर चोट पहुँचाई। यह थी उसकी माँ की छूआछूत की भावना। एक दिन किसी मुसलमान अतिथि के बैठने के लिए एला ने चटाई बिछा दी थी, उस चटाई को माँ ने फेंक दिया। गलीचा देने से शायद दोष नही लगता, एला का तार्किक मन बिना तर्क किये नही रह सकता था। एक दिन उसने अपने पिता से पूछा, 'अच्छा, इस प्रकार छूआछूत, स्नान-भोजन आदि की अन्ध भावना केवल स्त्रियो मे ही विशेपरूप से क्यो होती है? इसमे तो हृदय का जरा भी सहयोग नहीं रहता, केवल यन्त्र की तरह अधभाव को मानकर चलना है, मनोविज्ञानवेत्ता पिता ने कहा,

'स्त्रियो का मन हजारो वर्ष से गुलाम है। वे विश्वास कर सकती है, तर्क नही कर सकती। इसी से तो समाज ने समय-समय पर उन्हे पुरस्कृत किया है। विश्वास जितना ही अन्धा होता है, उसका मूल्य उनके पास उतना ही अधिक बढ जाता है। स्त्रैण पुरुषो की भी यही दशा होती है।' आचार की निरर्थकता के बारे मे एला अपनी मा से बार-बार प्रश्न करती थी, किन्तु बदले मे उसे प्रत्येक बार तिरस्कृत होना पडता था। ऐसे ही दैनिक आघातो के कारण एला का मन स्वच्छन्दप्रियता की ओर झुक गया।

परिवारवारिक द्वेष के भीतर पुत्री को घुल-घुल कर मरती देख कर नरेश का मन चिन्तित हो उठा। इसी बीच एक दिन एला किसी विशेष अन्याय से मर्माहत होकर नरेश के पास आकर बोली, 'पिताजी मुझे कलकत्ते के किसी बोर्डिंग मे भेज दें। प्रस्ताव उन दोनो ही के लिये दुखदाई था। किन्तु पिता ने परिस्थिति को ताड लिया एव मायामयी की अडचनो के बावजूद उसे कलकत्ता भेज दिया और स्वय अध्ययन-अध्यापन लेकर इस ममताहीन ससार मे पुन निमग्न हो गये।

माँ ने कहा, 'शहर भेजकर यदि लडकी को मेम बनाना चाहते हो तो बनाओ किन्तु ख्याल रखो, तुम्हारी दुलारी बेटी को ससुराल जाने पर इसका फल भुगतना पडेगा। उस समय मुझे दोष मत देना।' पुत्री के व्यवहार मे कलिकालोचित स्वतन्त्रता के कुलक्षण देखकर उसकी माँ ने ऐसी आशङ्का बार-बार व्यक्त की थी। एला अपनी भावी सास को परेशान करेगी, इस सम्भावना को निश्चित समझ कर उस काल्पनिक गृहणी के प्रति उनकी अनुकम्पा मुखरित हो उठती थी। इससे लडकी के मन मे यह बात घर कर गई थी कि लडकियो को विवाह

के लिए तैयार होने के पहले अपने को पगु बना लेना पडता है। न्याय-अन्याय की भेद भावना को दफना देना पडता है।

एला के मैट्रिक पास कर कॉलेज मे प्रवेश करते ही उसकी मा का देहान्त हो गया। नरेश ने समय-समय पर बेटी के सामने विवाह का प्रश्न लाकर उसे राजी करने का प्रयत्न किया था। एला अपूर्व सुन्दरी थी, पात्रो की ओर से प्रार्थना का अभाव नही था किन्तु विवाह के प्रति घृणा जैसे उसके सस्कार मे प्रविष्ट हो चुकी थी। पढाई-लिखाई समाप्त होते ही उसे अविवाहिता छोडकर नरेश भी चल पडे।

सुरेश नरेश का भाई था। उन्होने अन्त तक उसके पढने का खर्च देकर उसे आदमी बनाया था। प्राय दो वर्षो के लिए उसे विलायत भेज कर उन्हें पत्नी द्वारा लाञ्छित एव महाजनो के प्रति ऋणी भी बनना पडा था। सुरेश इस समय डाक-विभाग का एक उच्च पदस्थ अधिकारी था। काम के सिलसिले मे उसे भिन्न-भिन्न प्रान्तो का भ्रमण करना पडता था। अब उसी पर पडा एला का भार। अत्यन्त यत्न के साथ उसने भी इस दायित्व को ग्रहण किया।

सुरेश की पत्नी का नाम था माधवी। जिस प्रकार के परिवार की लडकी वह थी, उसमे पढाई का चलन नाम मात्र को था और माधवी की शिक्षा उस मापदण्ड से भी निचले दर्जे की थी। स्वामी विलायत से आकर उच्च पद पर नियुक्त हो दूर-दूर की यात्रा करते थे, उस समय उसे बाहर के नाना प्रकार के लोगो के साथ सामाजिक व्यवहार का निर्वाह करना पडता था। कुछ दिनो के अभ्यास के बाद माधवी निमन्त्रण-आमन्त्रण मे विलायती व्यवहार करने में प्राय कुशल हो गई थी। यहाँ तक कि गोरे साहबो के क्लब मे टूटी-फूटी अग्रेजी भाषा को बे मतलब की हँसी द्वारा पूर्ण कर काम चला लेती थी।

ऐसे ही वक्त जब सुरेश किसी प्रदेश के बडे शहर मे था, एला उसके घर आई, रूप, गुण एव विद्या देख कर उसके चाचा फूले नही समाये। अपने ऊपर के पदाधिकारियो, सहकर्मियो तथा देशी और विलायती भाषा-भाषियो के पास विभिन्न उपलक्षो मे एला को प्रस्तुत करने के लिए वे व्यग्र हो उठे। एला की स्त्री—बुद्धि को यह स्पष्ट होते देर नही लगी कि इसका फल शुभ नही होगा। माधवी मिथ्या आराम का बहाना कर प्रत्येक क्षण कहा करती, 'जान बचो, विलायती कायदा की सामाजिकता का दायित्व अब मेरे गले मन मढो। न मुझे विद्या है न बुद्धि।' परिस्थिति को भाप कर एला ने अपने का नारीत्व के कृत्रिम आवरण मे छिपा लिया। सुरेश की लडकी सुरमा को पढाने की जिम्मेदारी उसने अत्यन्त उत्साह के साथ अपने ऊपर ले ली और उसने अपना बाकी समय एक 'थीसिस' लिखने मे लगा दिया। विषय था 'बगला मगल-काव्य से चॉसर के काव्य की तुलना।' सुरेश ने इसे लेकर खूब प्रचार-काय किया। इसकी सूचना चारो तरफ प्रसारित कर दी। माधवी ने मुँह बिचका कर कहा, 'इतना बढकर।'

उसने पति से कहा, 'आपने लडकी को एला से पढने की इजाजत इतनी जल्दी दे दी! आखिर, उधर मास्टर ने कौन-सी गलती की है? कुछ भी कहो किन्तु मैं तो ।'

सुरेश ने आश्चय से कहा, 'क्या कहती हो तुम! एल के साथ अधर की तुलना!

'दो नोट-बुक रट कर पास कर लेने से विद्या नही आती।' कहती हुई माधवी तीर की तरह बाहर चली गई।

एक बात वह अपने पति से कहना चाहते हुए भी नही कह पाती, 'सुरमा की उम्र तेरह वष होने को चली, आज नही तो

कल पात्र की खोज मे जगह-जगह की खाक छाननी पडेगी, उस समय यदि एला सुरमा के पास रहेगी तो लडको की आँखो मे सबसे पहले एला ही जँचेगी। उन्हे क्या पता है कि सुन्दरता किसे कहते हैं।' लम्बी साँस लेकर वह इसी चिन्ता मे डूब जाती। इन बातो से पति को परिचित कराने की आवश्यकता नही। गृहस्थी की हर चीज पुरुषो को नही सूझती।

एला का जल्द-से-जल्द विवाह कर देने के लिये माधवी बेचैन हो उठी। विशेष प्रयत्न करना नही पडा। अच्छे-अच्छे पात्र अपने आप आने लगे। उनमे कुछ ऐसे भी आते जिनसे सुरमा का सम्बन्ध स्थिर करने के लिए माधवी मचल उठती। किन्तु एला उन्हे बार-बार निराश कर लौटा देती।

भतीजी के इस रुखे हठ से सुरेश बेचैन हो उठे। उधर चाची के लिए भी बर्दाश्त करना दूभर हो उठा। एक बगाली की जवान लडकी के लिये अच्छे वर की उपेक्षा अपराध है। नाना प्रकार की वयसोचित आशकाओ और अपनी जिम्मेदारी का ख्याल कर सुरेश का कलेजा काँपने लगा। एला स्पष्टरूप से समझ गई कि उसके कारण चाचा के अन्तर मे स्नेह और ससार का द्वन्द्व उठ खडा हुआ है।

इसी समय इन्द्रनाथ का उस शहर मे आगमन हुआ। देश के छात्र उन्हे राजचक्रवर्ती की तरह मानते थे। उनका तेज असाधारण था उन्हे और ख्याति भी प्रचुर थी। एक दिन सुरेश के घर से उन्हे निमन्त्रण मिला। उस दिन किसी सुयोग से परिचय न होने पर भी एला ने नि सकोच भाव से उनसे कहा, 'क्या आप मुझे कोई काम नही दे सकते ?'

आजकल इस प्रकार का आवेदन विशेष आश्चर्यजनक नही। उनकी सौदर्य-ज्योति से इन्द्रनाथ चकित हो उठे। उन्होने कहा, 'कलकत्ते मे हाल ही मे बालिकाओ के लिए नारायणी हाई स्कूल खोला गया है। उसकी प्रधान शिक्षिका के रूप तुम्हे नियुक्त कर सकता हूँ। तयार हो ?'

'तैयार हूँ, यदि आप मेरे ऊपर विश्वास करे।'

इन्द्रनाथ ने एला के मुख पर अपनी उज्ज्वल दृष्टि

करते हुए कहा, 'मैं आदमी पहचानता हूँ। तुम्हारे ऊपर विश्वास करने मे मुझे क्षणभर की भी देरी नही हुई। तुम्हे देखते ही पता चल गया कि तुम नवयुग की दूतिका हो, तुम्हारे अन्तर मे नव-युग का आह्वान है।'

इन्द्रनाथ के मुख से एकाएक इस प्रकार की बातें सुनकर एला का कलेजा धडक गया।

उसने कहा, 'आपकी बातो से डर लग रहा है। झूठ-मूठ मुझे बढावा मत दीजिये। अपनी भावना के योग्य बनने के लिए दु साध्य चेष्टा करते-करते मैं टूट जाऊँगी, अपनी शक्ति की सीमा के भीतर जितना कर सकूँगी, आपके आदश की रक्षा करूँगी किन्तु कपट नही करूँगी।'

इन्द्रनाथ ने कहा, 'किन्तु ससार के बन्धन मे कभी न बँधने की प्रतिज्ञा तुम्हे लेनी पडेगी। तुम समाज की नहीं, सारे देश की हो।'

एला ने सिर उठा कर कहा, 'यही मेरी प्रतिज्ञा है।'

चाचा ने जाने को तैयार एला से कहा, 'तुमसे अब मैं विवाह के बारे मे कुछ भी नही कहूँगा। तुम मेरे पास ही रहो। इसी स्थान पर मुहल्ले की लडकियो को पढाने के लिए छोटा-मोटा क्लास खोल देने मे कोई हानि नही है।

चाची ने मोह मे पडे हुए पति के हठ से नाराज होकर कहा, 'वह सयानी हो चुकी है। यदि अपनी जिम्मेदारी खुद लेना चाहती है तो इसमे हर्ज ही क्या है। तुम बीच मे रुकावट क्यो डालना चाहते हो ? तुम चाहे जो कुछ सोचो किन्तु मैं स्पष्ट कहे देती हूँ कि उसकी चिन्ता मुझे रन्चमात्र भी नहीं होगी।'

एला ने खूब जोर देते हुए कहा, 'मुझे काम मिला है, मैं काम करने जाऊँगी ही।'

और एला काम करने चली गई।

इस भूमिका के बाद पाच वर्ष व्यतीत हो गये और अब कहानी बहुत आगे बढ गई है।

प्रथम अध्याय

चाय की दुकान और उसी के बगल मे एक छोटा-सा कमरा। उस कमरे मे सजाई गई स्कूल कालिज की कुछ पुस्तकें, जिनमे अधिकाश सेकैंड हैंड हैं। कुछ योरोपीय आधुनिक कहानियो एव नाटकों के अँगरेजी अनुवाद हैं। गरीब लडके पन्ने उलट कर उन्हे पढते और चले जाते है—दूकानदार को किसी तरह की आपत्ति नही होती। मालिक का नाम कन्हाई गुप्त है। ये पुलिस के पेन्शनभोगी सब-इन्सपेक्टर हैं।

सामने सदर रास्ता है, बाई ओर से गली निकलती है। जो एकान्त मे चाय पीना चाहते हैं, उनके लिए कमरे का एक हिस्सा फटी हुई चिक के टुकडे द्वारा अलग कर दिया गया है। आज उसी हिस्से मे किसी विशेष आयोजन के लक्षण दिखाई पडते हैं। स्टूल और चौकियो की अभाव-पूर्ति विशेषत 'दार्जिलिङ्ग चाय कम्पनी' के मार्के से युक्त पैकिंग बॉक्सो द्वारा की गई है। चाय के बर्तन एक दूसरे से भिन्न है। कुछ पर नीले रङ्ग का एनामेल किया गया है तो कुछ सफेद चीनी मिट्टी के हैं। टेबुल के ऊपर टूटी हुई मूठ के दूध रखने वाले जग मे गुलदस्ना सजाया गया है। समय होगा करीब तीन का। दल के सदस्यो ने एलालता को निमन्त्रण देते समय ढाई बजे आने को बताया था। कहा था, एक मिनट भी इधर-उधर हो जाने से काम बिगड जायेगा। असमय मे ही निमन्त्रण इसलिए दिया था क्योंकि इसी वक्त दूकान खाली रहती थी। चाय पीने वालो की भीड शुरू होती थी साढे चार बजे के बाद। एला ठीक समय पर आ गई किन्तु

अभी तक और किसी का पता भी नही था। अकेली बैठी वह सोच रही थी, 'तो क्या तारीख सुनने मे भूल हुई है।' इसी समय इन्द्रनाथ को कमरे मे प्रवेश करते देखकर वह चौंक उठी। इस स्थान पर उनके आगमन की लेशमात्र भी आशा नही की जा सकती थी।

इन्द्रनाथ ने योरोप मे बहुत समय बिताया था। विज्ञान मे उन्हे विशेष प्रतिष्ठा मिली थी। वे बडे औहदे की नौकरी के लिए उम्मीदवार बन सकते थे। योरोपीय अध्यापको ने उन्हे उदार भाषा मे प्रशसापत्र दिए थे। योरोप मे रहते समय उनका साक्षात्कार किसी बदनाम भारतीय राजनीतिज्ञ से हुआ था और देश मे लौट आने पर यही लाञ्छना उनके प्रत्येक कार्य मे बाधा देने लगी। अन्त मे, इङ्गलैंड के किसी विख्यात विज्ञान-शिक्षक की सिफारिश से उन्हे अध्यापन का काम मिला, किन्तु वह काम भी एक अयोग्य शासक के मातहत था। अयोग्यता के साथ प्रखर ईर्ष्या स्वाभाविक होती है, इसी से उनकी वैज्ञानिक शोध की चेष्टा मे, कदम-कदम पर उच्च पदस्थो का हस्तक्षेप होने लगा। अन्त मे उन्हे एक ऐसे स्थान पर बदल दिया गया जहाँ वैज्ञानिक प्रयोगशाला नही थी। उन्हे समझते देर न लगी कि उनके जीवन के सर्वोच्च अध्यवसाय की राह बन्द कर दी गई है। पिटी-पिटाई डगर पर मास्टरी की वही पुरानी गाडी चरमराती हुई अन्त मे सामान्य पेन्शन के अड्डे पर पहुँच कर रुक जायेगी। अपनी यह दुर्गति वे किसी भी तरह सहन करने के लिए प्रस्तुत नही थे। उन्हे विश्वास था कि किसी स्वतन्त्र देश मे सम्मान-लाभ करने की शक्ति उन मे कूटकूट कर भरी थी।

एक बार इन्द्रनाथ ने जर्मन और फ्रेंच भाषाओ को सिखाने के

लिये क्लास खोला, उसी के साथ कॉलेज के छात्रो को 'बॉटनी' और 'जियालॉजी' मे सहायता करने का भी भार लिया। क्रमश इम क्षुद्र सगठन के गुप्त तहखाने को चीरती हुई षडयन्त्र की कुटील जजीर कारागार के आगन के बीचोबीच होती हुई बहुत दूर तक बिखर गई।

इन्द्रनाथ ने पूछा, 'एला, तुम यहाँ हो ?'

एला ने कहा, 'अपने दलवालो को मेरे घर पर जाने से मनाही करदी है, इसलिये उन्होने मुझे ही यहा बुलाया है।'

'यह सूचना मुझे पहले ही मिल चुकी थी खबर पाते ही मैंने उन्ह अन्य जरूरी कामो मे लगा दिया है। अब मैं उन सबो की ओर से माफी मागने आया हूँ, बिल भी चुक्ता कर दूँगा।'

'आपने मेरा निमन्त्रण क्यो तोड दिया ?'

'युवको पर तुम्हारी सहृदता का जो प्रभाव है, उसे दबा देने के लिए। कल एक लेख पढोगी जिसे मैंने तुम्हारे नाम से अखबार मे भेज दिया है।'

'क्या आपने लिखा है! भला, कही आपकी कलम भी छिपी रह सकती है! लोग उसे असली नही समझेंगे।'

'बाये हाथ की कच्ची लिखावट बुद्धि का परिचय नही, सदुपदेश मात्र है।'

'किस तरह ?'

'तुमने लिखा है—युवक कच्ची उम्र मे ही यौन-सज्ञा द्वारा देश को सत्यानाश तक पहुँचाने पर आमदा है। बग-नारियो के प्रति तुम्हारी सकरुण अपील यही है कि वे इन जवानो के दिमाग ठण्डे करें। तुमने लिखा है—बातो से तिरस्कार करने पर उन के कानो पर जूँ तक नही रेंगेगी। उनके बीच मे उतरना पडेगा,

जहाँ उन के गिरोह का अड्डा है शासनकर्त्ताओं को सन्देह होता है तो हो। तुमने आगे चल कर लिखा है—तुम लोग माता के पवित्र पद पर प्रतिष्ठित हो, यदि उनका दण्ड स्वय भुगत कर उनकी रक्षा कर सको तो मरण सार्थक होगा। आज कल तो तुम हमेशा कहती रहती हो—तुम सब-की-सब माँ हो। इस बात को ही नमकीन जल मे भिगो कर मैंने लेख के भीतर जड दिया है। मातृवत्सल पाठका की आँखे उमड पडेगी। यदि तुम पुरुष होती तो इसके वाद रायबहादुर की पदवी असम्भव नही होती।'

'आपने जो कुछ भी लिखा है, वे एकदम मेरी बातें नही, ऐसा तो नही कहती। इन सवनाशी युवको के प्रति मेरा स्नेह जरूर है। ऐसे तरुण हैं ही कहाँ! एक दिन उनके साथ कॉलेज मे पढी हूँ। पहले-पहल उन्होने वोर्ड पर मेरे नाम के साथ अट-सट जोडना शुरू किया। पोछे से चिल्ला कर मुझे छोटी इलायची नाम से पुकारते और फिर भले आदमियों की तरह चुपचाप आकाश की ओर देखने लग जाते। मेरी सखी इन्द्राणी जो फोथ ईयर मे पढती थी, उसे बडी इलायची कहते थे। वह बेचारी कुछ विशेष गम्भीर रहती थी, रग भी साफ नही था। ऐसे ही छोटे-मोटे उत्पातो को लेकर अनेक लडकियाँ क्रुद्ध हो जाती, किन्तु मैं लडको का ही पक्ष लेती थी। मैं जानती थी कि हम लडकियाँ उनकी आखो के लिए अनभ्यस्त हैं, इसीलिए उनका व्यवहार भी टेढा-मेढा है, उसमे कभी-कभी कायरता का भी आभास मिलता है किन्तु यह उनके लिये स्वाभाविक नही। जव आदत पड गई तो आवाज अपने आप स्वाभाविक हो गई। बाद में छोटी इलायची से मैं एला दीदी वनी। बीच-बीच में किसी-किसी के सम्बोधन मे मधुर रस भी रहता था। यह अस्वाभाविक

भी तो नही था। इन सब बातो से मैंने कभी भी भय नही किया है। मैं अनुभव मे जानती हूँ कि तरुणो के साथ व्यवहार करना अत्यन्त सरल है, शर्त यह है कि लडकियाँ जाने या अनजाने उन्हें शिकार करने का अवसर न दें। उसके बाद एक-एक कर देखा कि उन सबों मे जो बहुत अच्छे हैं जिनमे नीचता नही, लडकियो के प्रति जिनकी सम्मान-भावना पुरुषोचित है ।'

'अर्थात् कलकत्ता के रसिक लडको की तरह जिनका रस नही उमड रहा हो ।'

'हाँ, वे ही मृत्यु-दूत के पीछे पीछे शहीद बनने का अरमान सँजाये दौड पडे। वे हम लोगो की ही तरह बगाली हैं। वे ही यदि मरने के लिए तैयार हैं तो मैं ही क्यो घर के कोने में छिप कर अपनी जान की खैरियत मनाती। किन्तु देखिये मास्टर साहब, मैं सच्ची बातें ही कहूँगी। ज्यो-ज्यो समय बीतता जाता है, हम लोगो का उद्देश्य उद्देश्य न रहकर नशा मे बदलता जा रहा है। हम लोगो के काम करने के ढग के साथ विचार शक्ति का कोई मेल नही है। और यह अच्छा भी नही लगता। ऐसे युवको की जब किसी अन्य शक्ति के सामने बलि दी जाती है तो छाती फटने लगती है।'

'वत्से, यह जो धिक्कार है, वास्तव मे यही कुरुक्षेत्र की भूमिका है। अर्जुन के मन मे भी विषाद का उदय हुआ था। डाक्टरी सीखने के प्रारम्भ मे मुर्दा काटते समय मैं प्राय मूर्छित-सा हो जाता था। इस तरह की घृणा ही वास्तव मे घिनौनी है। शक्ति का जन्म निष्ठुर साधना मे होता है और अन्त क्षमा मे। तुम जो कहती हो कि औरते माताओ की जाति है, मेरी समझ मे गौरवपूर्ण बात नही। माँ तो प्रकृति द्वारा स्वभाविक रूप मे

उत्पन्न की जाती हैं एव इस दृष्टि से मानवेतर प्राणी भी अपवाद नही। उससे महत्वपूर्ण सत्य यह है कि तुम लोग शक्ति रूपिणी हो, दया-माया की दलदल को मजबूत नौका से पार कर इसी को प्रमाणित करना होता। शक्ति दो, पुरुष को शक्ति दो।'

'इस तरह की थोथी दलील देकर आप हम लोगो को भरमा रहे है। वास्तव मे जितनी हमारी क्षमता है, हम उससे अधिक का दावा करते है। इतना सहन नही होगा।'

'अधिकार के जोर से ही हक की सच्चाई साबित होती है। तुम्हारे ऊपर हमारा जैसा विश्वास होगा, वैसे ही तुम बन भी जाओगी। तुम भी उसी प्रकार हमारे ऊपर विश्वास करो जिससे हमारी साधना सफल हो सके।'

'आपकी बातो का आदर करती हूँ, किन्तु इस समय नही। मेरी स्वय कुछ कहने की इच्छा है।'

'अच्छा, तब यहा नही, चलो, उस पीछे वाले हिस्से मे।'

वे पर्दे के पीछे वाले अँधेरे हिस्से मे चले गए। वहा एक पुरानी टेबल थी, उसके दोनो बगल दो बेन्चें थी और था दीवार पर भारतवर्ष का एक बडा-सा मानचित्र।

'आपने यह अन्यायपूर्ण काम किया है, यह मैं बिना कहे नही रह सकती।'

इन्द्रनाथ से ऐसा कहने का साहस एकमात्र एला को ही था, फिर भी उतना सरल भी नही था, इसलिए कहते समय गले पर जरूरत से ज्यादा ताकत लगानी पडी।

इन्द्रनाथ देखने मे सुन्दर है, इतना भर कहने से उसके बारे मे सब कुछ नही कहा जा सकता। उसकी मुद्रा पर एक जबरदस्त आकर्षण-शक्ति है। मानो उसके अन्तर मे वज्र बँधा हुआ है,

उसकी गजना कानो तक नही पहुँचती, उसकी निष्ठुर दीप्ति बीच-बीच मे निकलकर बाहर उद्भासित हो जाती है। चेहरे पर मँजी मँजाई भद्रता झलकती है—शान दी हुई छुरी की तरह। तीखी बात कहने मे झिझक नही होती किन्तु हँसकर बोलता है। गले की आवाज क्रोध के आवेग म भी नही चढती, क्रोध का पता चलता है हँसी मे। जितनी दूर तक परिच्छन्नता से मर्यादा की रक्षा हो सकती है, उतनी दूर तक वह अपने को नही भुलाता और न अतिक्रम ही करता है। बाल जरूरत से ज्यादा छोटा कर दिये गये है यत्न न करने पर भी हवा के झाके से अस्त-व्यस्त हो जाने की आशङ्का नही। चेहरा बादामी रङ्ग का है—लालिमा से युक्त। भौहो के दोना ओर विस्तृत ललाट, आखो मे दृढ विवेक की तीक्ष्णता, ओठो पर अविचलित सकल्प एव प्रभुत्व का गौरव है। अत्यन्त दु साध्य आदेश वह अनायास ही दे सकता है। उसे मालूम है कि उसकी बात आसानी से नही टाली जा सकती। कोई यह समझता है कि उसकी बुद्धि असाधारण है तो किसी के अनुसार उसकी शक्ति अलौकिक है। साथ ही वह किसी की असीम श्रद्धा का अधिकारी है तो किसी को उससे अकारण ही डर है।

इन्द्रनाथ ने हँसते हुए कहा, 'कैसा अन्याय ?'

'आपने उमा को विवाह करने का आदेश दिया है किन्तु वह तो विवाह करना चाहती नही।'

'कौन कहता है, नही चाहती ?'

'वह स्वय कहती है।'

'शायद वह स्वय ठीक-ठीक नही जानती अथवा सच्ची बात नही बताती।'
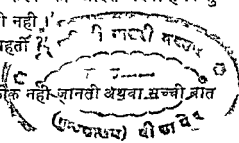
'उसने आपके सामने विवाह न करने की प्रतिज्ञा की थी।'

'उस समय उसकी बात ठीक थी किन्तु अब ठीक नही। अबानी सच्चाई का कुछ भी महत्व नही। अन्त मे उमा स्वय ही प्रतिज्ञा तोड देती, मैंने तुडवा दी, उसे अपराध करने से बचा लिया।'

'प्रतिज्ञा रखने अथवा न रखने का दायित्व उसी का है, अगर तोडती तो अपराध करती।'

'तोडने-फोडने के प्रभाव से तो आस-पास की अनेक चीजें टूट जाती, इससे हम सबो का नुकसान होता।'

'कि तु वह तो अब बहुत रो रही है।

'फिर तो रोने-धोने की अवधि भी बढने नही दूंगा—कल परसो के भीतर ही विवाह करा दिया जायेगा।'

'कल-परसो के बाद भी तो उसका पहाड-सा जीवन पडा है।

'विवाह के पहले लडकियो की रुलाई 'प्रभाते मेघाऽम्बरवत्' है।'

'आप निष्ठुर हैं।'

'क्यो नही, मनुष्य से जो विधाता प्रेम करता है, वह भी तो निष्ठुर है। आखिर वह पशुता को ही तो प्रश्रय देता है।'

क्या आप ठीक-ठीक जानते है कि उमा सुकुमार से प्रेम करती है?'

'इसीलिए तो मैं उसे अलग करना चाहता हूँ।'

'यह है प्रेम करने की सजा?'

'प्रेम करने की सजा का कुछ अर्थ ही नही। तब तो यह भी कहना कि चेचक की बीमारी हुई है, सजा ही हे। जानती हो कि चेचक के निकलते ही रोगी को घर मे रखने से अस्पताल मे भेज देना कही अधिक अच्छा है।'

'सुकुमार के साथ विवाह कर देने से भी तो काम चल सकता है।'

'सुकुमार ने तो कोई गलती नही की। उसके समान हमारे बीच कितने कार्यकर्ता हैं ?'

'वह यदि स्वय उमा से विवाह करने के लिए तैयार हो जाये ?'

'असम्भव नही। इसीलिए तो इतना निग्रह हे। उसके समान विचारवान् पुरुष के मन मे भ्रम पैदा कर देना नारियो के लिए महज बाएँ हाथ का खेल है। भद्रता के नाते सुकुमार के लिए दो-एक बूद आसू टपका देना सम्भव हो सकता है। सुनकर शायद क्रोधित हाती हो ?'

'क्रोध क्यो करूँगी ? नारियो ने मौन रह दक्षता को प्रश्रय दिया है और उसका उत्तराधिकार मिला है पुरुष को। मेरी जानकारी मे ऐसी घटनाओ का अभाव नही। समय आया है सत्य के अनुरोध से न्याय करने का। मैं ऐसा करती आ रही हूँ, इसीलिए औरतें मुझे देख तक नही पाती। जिस भोगीलाल के साथ उमा का विवाह होगा, आखिर उसका मत क्या है ?'

'उस निरीह भलेमानुस का मतामत का मूल्य ही कितना है। वह बगाली लडकियो को विधाता की अपूर्व सृष्टि समझता है। उस प्रकार के कामी युवक को दल से बाहर कर देना नितान्त आवश्यक है। जजाल हटाने की सबसे अच्छी तरकीब शादी है।'

'इन सब उत्पातो की आशका के बावजूद भी आपने पुरुष और नारी को यहाँ एकत्र क्यो किया है ?'

'इसलिये कि जिस सन्यासी ने शरीर मे [illegible]मल ली,

और अपनी सारी इच्छाओं का भस्म-कुण्ड मे हवन कर दिया है, उस नपुसक से काम नही हो सकता। जब देखूगा कि हम लोगो के दल का कोई अग्नि-उपासक असावधानी से अपने ही बीच अग्नि-काण्ड करने बैठा है तो उसे अलग कर दूंगा। हम लोगो का अग्नि-काण्ड राष्ट्रव्यापी यज्ञ है, बुझे हुए मन से इसका उपचार नही हो सकता और न उनके द्वारा जो आग को दबाना नही जानते।'

एला गम्भीर बनी बैठी रही। कुछ देर बाद आँखें नीची कर बोली, 'तब आप मुझे छोड दे।'

'इतना नुक्सान सहने के लिए क्यो कहती हो ?

'आप जानते नही।'

'नही जानता हूँ, किसने कहा। एक दिन देखा गया कि तुम्हारे खादी-परिधान मे जरा-सा रग है। ज्ञात हुआ है कि तुम्हारे हृदय में प्रेम का उदय हो रहा है। जानता हूँ कि किसी के पैरो की आवाज के लिए तुम्हारे कान तरसते है। अभी गत शुक्रवार की बात है, मैं तुम्हारे घर गया था और तुमने अन्य किसी के आने का अनुमान किया था। देखा कि तुम्हें अपने चित्त को स्थिर करने मे कुछ समय लगा। इसमे लज्जा की कौन-सी बात है कुछ भी असगत तो नही।'

एला के कणमूल लाल हो गए। वह चुपचाप बैठी रही।

इन्द्रनाथ ने कहा, 'तुमने किसी से प्यार किया है, यही तो। तुम्हारा दिल तो पत्थर का बना नही। जिससे प्रेम करती हो, उसे भी जानता हूँ।'

'आपने स्थिर चित्त से काम करने के लिए कहा था। सब स्थितियो मे यह सम्भव नही हो सकता।'

'सबके पक्ष मे नही। किन्तु प्रेम के बोझ से व्रत को डुबो दोगी, ऐसी स्त्री तुम नही।'

'किन्तु '

'इसमे किन्तु, परन्तु कुछ भी नही—तुम्हे किसी तरह भी छुटकारा नही मिल सकता ।'

'मैं तो आप लोगो के किसी भी काम की नही, यह तो आप जानते ही है ।

'तुमसे मुझे काम नही चाहिये और काम की सारी बाते तुम्हे मालूम भी नही । तुम स्वय कैसे समझ सकती हो कि तुम्हारे हाथ से लगाया गया रक्त-चन्दन का तिलक तरुणो के मन की आग को किस प्रकार धधका देता है । उसके बिना एक-मात्र सूखी तनख्वाह देकर काम कराने से पूरा काम मुझे नही मिल सकता । हम लोगो ने कचन-कामिनी का त्याग नही किया है । जहा कामिनी के प्रभाव से लाभ हो सकता है, वहाँ कामिनी को वेदी पर आसन देकर बैठाया भी है ।'

'आपके सामने झूठ नही बोलूगी, मैं समझ रही हूँ कि मेरा प्रेम दिन-प्रतिदिन अन्य प्रिय लगने वाली वस्तुओ को छोडता जा रहा है ।'

'कोई डर नही । खूब प्रेम करो । एकमात्र 'माँ-मा' की रट लगाकर जो देश को जाग्रत करना चाहते है, वे अबोध बालको की तरह है । देश वृद्ध शिशुओ की माँ नही, देश अर्द्ध-नारीश्वर है—पुरुष और नारी के मिलने से उनकी उपलब्धि हुई है । ससार-पिजरे मे बन्दिनी बनकर इस मिलन को निस्तेज मत बनाओ ।'

'किन्तु फिर आपने जो उस उमा को '

'उमा ! कालू ! प्रेम के रुद्र रूप को वे सहन किस प्रकार कर सकेंगे । जिस दाम्पत्य जीवन के तट पर वे अपनी सारी

साधनाओ की अन्त्येष्टि-क्रिया करना चाहते हैं, मैं उन्हे उसी घाट पर समय से पहले ही भेज देता हूँ। छोडो इन बातो को। सुना गया है कि परसो रात तुम्हारे घर चोर घुसा था।

'हाँ, घुसा तो था।'

'तुमने कुश्ती के दाव-पेंच सीखने से कुछ लाभ उठाया था ?'

'मेरा विश्वास है कि मैंने चोर का कब्जा तोड दिया है।'

'दिल के भीतर से आह-उह की आवाज नही सुनाई पडी ?'

'उठती, किन्तु भय था कि कही वह मेरा अपमान न करदे। यदि वह पीडा से हार मान जाता तो अन्त तक उसकी हड्डी नही चटकाती।'

'क्या तुमने उसे पहचाना है ?'

'अँधेरे मे दिखाई नही पडा।'

'यदि तुम देख पाती तो मालूम हो जाता कि वह अनादि है।'

'अरे, यह कैसी बात! हम लोगो का अनादि। अभी तो वह निरा बालक है।'

'मैंने ही उसे भेजा था।'

'आपने ही ऐसा काम क्यो किया ?'

'तुम्हारी भी परीक्षा हुई, उसकी भी'

'आप कितने क्रूर हैं!'

मैं नीचे के तल्ले मे था। उसी समय मैंने उसकी हड्डी ठीक कर दी। तुम अपने को आपत्तियो मे कायर समझती हो। तुम्हे यह बताना था कि वास्तव मे विपद के आने पर कायरता नही रहती। उस दिन मैंने, तुम्हे मेमने पर पिस्तौल की गोली दागने के लिए कहा था। तुमने इन्कार कर दिया। तुम्हारी फुफरी

वहन ने गोली मार कर बहादुरी दिखाई। जव उसने देखा कि मेमना पैर मे गोली खाकर गिर पडा है, तव वह दृढता का अभिनय करती हुई हँस पडी। किन्तु वह हिस्टिरिया की हँसी थी, सारी रात उसे नीद नही आई। किन्तु तुम्हे यदि बाघ खाने आता और तुम भय नही करती तो इसी वक्त उसे मार देती। दुविधा मे नही पडती। हम लोगो ने उसी बाघ को अपने मन मे प्रत्यक्ष देखा है, दया-माया का विसजन किया है, ऐसा नही होता तो मैं अपने को भावुक समझ कर अपने से ही घृणा करता। श्रीकृष्ण ने अर्जुन को यही तथ्य समझाया था। निदय मत बनो किन्तु कत्तव्य के अह्वान पर दया भी मत करो। समझी ?'

'समझी।'

'यदि समझ गई तो एक प्रश्न करूँगा। क्या तुम अतीन से प्रेम करती हो ?'

कोई उत्तर न दे एला चुपचाप बैठी रही।

यदि वह हम सबो को किसी आफत मे फँसा दे तो क्या अपने हाथ से उसे मार नही सकती हो ?'

'उससे इस तरह का भय करना निर्मूल है, अत मुझे 'हा' कहने मे कोई आपत्ति नही।'

'यदि कही सम्भव हुआ तो ?'

'मुँह से भले ही कुछ कह बैठू किन्तु क्या अपने अज्ञात अन्तर की सारी बातें मुझे मालूम है ?'

'अपने को जानना ही होगा। समस्त क्रूर सम्भावनाओ की कल्पना कर अपने को तैयार रखना ही होगा।'

'मैं बिल्कुल सही कहती हूँ कि मेरे सम्बन्ध मे आपका चुनाव गलत हुआ है।'

'मैं भी सही-सही जानता हूँ कि मुझसे भूल नही हुई है।'

'मास्टर साहब आपके पैरो पर पडती हूँ, अतीन को छोड दीजिए।'

'मैं छोडने वाला होता ही कौन हूँ। उसने स्वय वन्धन स्वीकार किया है। उसके मन की द्विविधा कभी भी नही मिट सकती। उसकी इच्छाओ पर प्रतिक्षण चोट पहुँचेगी, तब भी उसका आत्मसम्मान उसे अन्त तक दृढ रखेगा।'

'आदमी पहचानने मे क्या आपसे कभी भी भूल नही होती ?'

'होती है। बहुत से आदमी हैं जिनके स्वभाव के ताने-बाने मे किसी प्रकार का मेल नही बैठता। अतएव उनके सम्बन्ध मे वे दोनो पक्ष ही सत्य हैं। वे अपने को पहचानने मे भी भूल करते हैं।'

भारी गले की आवाज सुनाई पडी, 'क्यो भैया ?'

'शायद कन्हाई है। आओ, आओ।'

कन्हाई गुप्त ने घर मे प्रवेश किया। वह कद का ठिंगना, आकार मे मोटा और उम्र मे अधेड-सा लगता था।

कई सप्ताहो से उसे दाढी मूँछ तक बनाने की फुसत नही मिली थी, चेहरा कँटीला-सा लगता था। सामने का सिर गजा था, धोती के ऊपर खादी की मोटी चादर थी जिसकी धुलाई मुद्दतो मे नही हुई थी, शरीर पर कुर्ता नही था दोनो हाथ शरीर की तुलना मे छोटे थे। ऐसा लगता था, मानो वह सदा किसी-न-किसी काम मे लगा रहता है। दल के लोगो के लिए जहाँ तक सभव था, खुराक जुटाने के लिए कन्हाई ने चाय की दूकान खोली थी।

कन्हाई ने अपने स्वाभाविक दबे हुए स्वर से कहा, 'भैया, तुम वाक्सयमी के रूप मे ख्यात हो, तुम्हे मुनि कहना ही ठीक

है। शायद एला दीदी ने तुम्हारी उस ख्याति को मिट्टी मे मिला दिया।

इन्द्रनाथ ने हँसकर कहा, 'मौन रहने की साधना तो हम करते भी हैं। नियम की रक्षा के लिए कभी-कभी इसका व्यतिक्रम आवश्यक हो जाता है। एला स्वय बाते नही करती, दूसरो को बोलने का अवसर देती है। वाणी के प्रति इसका यह एक प्रकार का बहुमूल्य आतिथ्य है।'

'क्या कहते हो भैया ? एला दीदी बातें नही करती ? तुम्हारे निकट चुप रहती हैं किन्तु जहा जबान खोलती है, वहा तो गजब ढा देती है। मेरे तो बाल पक गये है, पुकार होते ही खाता-पत्रा फेंककर आड से उनकी बाते सुनने आता हूँ। अब मेरी बातो की ओर थोडा ध्यान देना होगा। एला दीदी की तरह तो मेरा स्वर नही किन्तु थोडे मे जो कुछ भी कहूँगा, हृदय तक पहुँचेगा।'

एला झटपट उठ खडी हुई। इन्द्रनाथ ने कहा, 'जाने से पहले तुम्हे एक बात बताये देता हूँ। दल के लोगो के सामने मैं तुम्हारी निंदा करता रहता हूँ। यहाँ तक कि ऐसी बाते भी कह गया हूँ कि एक दिन तुम्हे दल से दूध की मक्खी की तरह निकाल बाहर करना होगा। कहा है अतीन को तुम दल से अलग करना चाहती हो, उसके अलग होते ही और भी कुछ अलग करना पडेगा।'

'ऐसा कहते-कहते क्या आपने सब कुछ सत्य भी मान लिया है ? क्या पता, शायद यहा की वस्तुस्थिति के साथ मेरा कुछ असामञ्जस्य भी हो।'

'ऐसा होने पर भी तुम्हारे ऊपर मेरा रञ्चमात्र भी सन्देह नही। किन्तु तब भी उन सबो के सामने तुम्हारी शिकायत ही करता हूँ। लोगो मे प्रचलित है कि तुम्हारा कोई दुश्मन नही,

किन्तु देखता हूँ कि तुम्हारे स्वजातीय बंगालियों में पचहत्तर प्रतिशत के मन निंदा पर विश्वास करने के लिए उत्कण्ठित हो उठते हैं। ये निन्दा पसन्द करने वाले व्यक्ति सब प्रकार की निष्ठाओं से वंचित हैं। मैं इनके नाम लिख लेता हूँ। ऐसे नामों से अनेक पन्ने भरे पड़े हैं।'

'मास्टर साहब, उन्हें निन्दा अच्छी लगती है, इसीलिए निन्दा करते हैं, इसलिए नहीं कि मेरे ऊपर उनका क्रोध है।'

'अजातशत्रु नाम तो तुमने सुना है एला! किन्तु ये सब के सब जात शत्रु हैं उनकी अकारण की शत्रुता बङ्गाल की प्रगति में बाधा पहुँचा रही है।'

'भैया, आज यहीं तक, बाकी बातें अगले दिन होंगी। एला दीदी यदि तुम्हारे चाय-निमन्त्रण को तोड़ने में मेरा भी चुपके-चुपके कोई हाथ हो तो माफ करना। मेरी चाय की दूकान में तो अब ताला लगने की सम्भावना है। इस बार मालूम पड़ता है कि तीन सौ मील दूर जाकर नाई की दुकान खोलनी पड़ेगी। इस बीच अलकानन्द तेल के पाच पीपे तैयार कर रखे हैं। महादेव के जटाजाल से यह निकाला गया है। एला, तुम्हें एक सर्टिफिकेट देना होगा। उसमें यह लिखा रहेगा कि जब से अलका ने तेल लगाना शुरू किया है, बाँधना जूड़ा कठिन हो गया है। बढ़ते हुए बालों को सम्भाल रखना स्वय दशभुजी देवी के लिए भी दुसाध्य है।'

जाते समय एला ने दरवाजे के पास पहुँचकर घूमते हुए कहा, 'मास्टर साहब, आपकी बातों का स्मरण रहेगा उनके लिए तैयार भी रहूँगी। हो सकता है, मेरे निकाले जाने का दिन आये, मैं चुपचाप अपना विलयन कर दूँगी।'

एला के चले जाने के बाद इन्द्रनाथ ने कहा, 'कन्हाई तुम परेशान क्यो दिखाई पडते हो ?

'हाल ही की बात है, उस सामने वाली टेबल पर रास्ते के किनारे बठकर तीन गुण्डे छोकरे वीर-रस का प्रचार कर रहे थे। आवाज से मालूम पडता था जैसे वे साड के पोष्य पुत्र हो। मैंने उन पर सेडिशन[1] का आरोप लगाकर पुलिस को सूचना दे दी है।'

'अनुमान करने मे गलती तो नही हुई कन्हाई ?'

'बल्कि गलती करके सन्देह करना अच्छा है, बिना सन्देह किए गलती करना घातक है। यदि वे खाटी उल्लू के पट्ठे ही होगे तो उन्हे कोई बचा नही सकता, या यदि वे खरे दुश्मन होगे तो उन्हे मार ही कौन सकता है। इससे मेरी रिपोट और भी जानदार बनेगी। उस दिन एक ने सातव आसमान पर चढ कर शैतान की हुकूमत के खिलाफ बगावत कर रक्त-गगा बहाने का प्रस्ताव उठाया था। निश्चय ही इन सबो के मूल मे अभय चरण रक्षित का हाथ है। एक दिन शाम को कैश-बॉक्स लेकर हिसाब मिलाने बैठा था। अचानक धूल-धूसरित फटे कपडे पहने एक युवक ने मेरे पास आकर कान मे कहा, 'पच्चीस रुपये चाहिये, दिनाजपुर जाना है।' उसने हम लोगो के मथुर मामा का नाम लिया। मैंने बिगडते हुए चिल्ला कर कहा, 'शैतान कही के तुम्हारी इतनी बडी हिम्मत ! अभी पुलिस के हवाले कर दूगा।' थाडा और समय मिलता तो इस प्रहसन को समाप्त ही कर देता। पकड कर थाने मे ले जाता। तुम्हारे दल के नौनिहाल

---

१ देश द्रोह के लिए भडकाता।

जो बगल के कमरे मे चाय पी रहे थे, मेरे ऊपर आग-बबूला हो उठे। उन्होने उसे देने के लिए चन्दा इकट्ठा करना शुरू किया। सबो के पास मिलाकर जमा पूँजी तेरह आने निकली। छोकरा तो मेरी सूरत देखते ही सरक गया।

'तब तो देखता हूँ कि फूटे ढक्कन की दरार से गध बाहर निकलने लगी—मक्खियो की आमद शुरू हो गई।'

'बेशक। और सुनो भैया, यदि तुम सचमुच भलाई चाहते हो तो अपनी मडली के छोकरो को जितनी जल्दी हो सके अलग-अलग कर दो। किन्तु ओसटेंसिबल मीन्स आफ लिवलीहुड[1] प्रत्येक के लिये निहायत जरूरी है।'

'यह तो ठीक ही है, किन्तु क्या कोई उपाय भी सोचा है ?'

'बहुत पहले ही। हाथ बँधे थे, नही तो खुद करके दिखा देता। उपाय भी सोच निकाला है, सामान भी धीरे-धीरे इकट्ठे कर रखे है। माधव कविराज ज्वराशनि वटिका बेचता है। उसमे बारह आने कुनाइन की मिलावट है। उन्हे उसके पास से लेकर लेवल बदल कर नाम दूँगा, मलेरियारि गुटिका। कुनाइन के पीछे अनेक झूठी बातें जोडनी पडेंगी। प्रतुल सेन को गुटिका के प्रचार के लिये क्वेंसर का बैग देकर बाहर भेजा जायेगा। तुम्हारा निवारण फर्स्ट क्लास एम० एस० सी० की लॉज छोड कर भैरवी कवच के प्रचार मे लग जाये। इस कवच मे सप्त धातुओ के अतिरिक्त नवीन रसायन से कतिपय नई धातुओ के नाम जोडकर प्राचीन ऋषियो के साथ आधुनिक विज्ञान का अभूतपूर्व सम्मेलन कराया जा सकता है। जगबन्धु सस्कृत के श्लोको के अर्थ व्याकरण सूत्रो के प्रपञ्च से बदल

१ जीवन-निर्वाह के लिये प्रत्यक्ष साधन।

कर यह प्रचार करना शुरू कर दे कि चाणक्य का जन्म बगाल प्रान्त के नेत्रकोण सब-डिविजन मे हुआ था। इसे लेकर साहित्य मे भीषण आलोचना-प्रत्यालोचना प्रारम्भ हो जाये। अन्त मे, चाणक्य जयन्ती मनाई जायेगी मेरे प्रपितामह की पुरानी पीठ पर। तुम्हारे डाक्टर तारिणी साडेल माँ शीतला के मन्दिर-निर्माण के लिये चन्दा मागने निकले और इसी सिलसिले मे मुहल्लेभर को जगा दें। असल बात यह है कि तुम्हारे 'ग्रेनाडियर' दल के चुने चुनाये तरुणो को कुछ दिनो के लिये बेमतलब के कामो मे छिपाकर रखना होगा। भले ही कुछ लोग बेवकूफ कहे और कुछ कुशल सासारिक।'

इन्द्रनाथ ने हँसकर कहा, 'तुम्हारी बाते सुनकर मेरी इच्छा होती है कि मैं भी एक व्यवसाय करूँ। अन्य किसी उद्देश्य से नहीं बल्कि केवल दिवालिया घोषित होने और मनोविज्ञान के अनुशीलन के लिये।'

कन्हाई ने कहा, 'भैया, तुम जिस व्यवसाय मे लगे हो, उसमे आज हो या कल निश्चित रूप से दिवाला निकलना ही है। ऐसी कोई बात नही कि जिनका दिवाला निकलता है, वे समझते नही, बल्कि असलियत इसमे है कि वे नुकसान की राह छोड ही नहीं सकते। दिवालिया होने की मरणलिप्सा एक प्रकार 'सब्लाइम'[1] आकर्षण है। उस विषय पर वर्तमान मे आलोचना करने से कोई लाभ नही। एक सवाल तुमसे करना है, एला सी सुन्दरी सब समय देखने को नही मिलती, इस बात को मानते हो या नही।'

---

१ उत्कृष्ट।

'मानता जरूर हूँ ।'

'तव उसे अपने वीच किस बूते पर रखा है ?'

'कन्हाई इतने दिनो मे तुम्हे मेरी अच्छी तरह परख कर लेनी चाहिये थी । जो आग से डरता है, वह आग का प्रयोग भी नही कर सकता । अपनी काय-प्रणाली से मैं आग को अलग नही रखना चाहता ।'

'यानी उससे काम वने या विगडे इसकी तुम्हे तनिक भी चिन्ता नही ।'

'सृष्टिकर्ता आग से खेलता है । निश्चित फल का हिसाव कर जगत् के काम नही होते । अनिश्चित की प्रत्याशा मे ही उसका विराट प्रवतन होता हे । ठीक है कि ठडा माल-मसाला लेकर वाजार दर का अनुमान कर अनुभवी अगुलियो से प्रतिमा गढी जाती है किन्तु इस प्रकार का लोभ मेरे अन्तगत नही है । अतीन को तो जानते ही हो उसका एला के प्रति आकृष्ट होना खतरे मे खाली नही, इसलिए मेरी बेचैनी वढ गई है ।'

'भैया, तुम्हारी इस भीषण लेवोरेटरी मे कधे पर झाडन लिये बैरा का काम करता हूँ । कोई गैस भडक उठे अथवा कोई यन्त्र टूट-फूट कर लग जाये तो सिर के सात टुकडे हो जायेंगे । उसके वारे मे गव की धृष्टता हम लोगो मे नही है ।'

'जवाव देकर अलग क्यो नही हो जाते ?

'हम लोगो को फल का लोभ जो है, भले ही तुम उससे वचित हो । तुम्हारे दलालो के ही मुख से सुना था कि 'ऐलिक्सिर आफ लाइफ'[1] तक मिल सकता है । तुम्हारे इस सवनाशी के

---

[1] आयु वढाने वाला रसायन ।

रिसच के चक्कर मे मेरे जैसे न जाने कितने गरीब निश्चित फल की आशा मे फँस गए है, अनिश्चित कुहासे मे भटकने के लिए उन्होने तुम्हारा साथ नही दिया है। तुम जिसे जुआरी की नजरो से देखते हो, हम लोग उसे व्यवसाय की सरल दृष्टि से देखते हैं। अन्त मे खतियान की बही मे आग लगा कर हम लोगो के साथ मजाक न करो, भैया ! उसके प्रत्येक दमडो धेले मे हम लोगो की छाती का खून है।'

'मेरे मन मे किसी प्रकार का अन्धविश्वास नही है, कन्हाई ! हार-जीत की चिन्ता मैंने एक बारगी छोड दी है। इस विराट कम-क्षेत्र मे मैं कर्त्ता तुल्य हूँ, इसमे इसीलिए हूँ कि मेरा मन मानता है। यहाँ की हार भी बडी है, जीत भी बडी है। उन लोगो ने मेरे चारो तरफ के दरवाजे बन्द कर मुझे छोटा बनाना चाहा था मरते-मरते मैं साबित कर देना चाहता हूँ कि मैं बडा हूँ। मेरी पुकार सुन कर अनेक पौरुष वाले मनुष्य मृत्यु की अवज्ञा कर चारो ओर से दौड पडे, उसे तो तुम देख रहे हो कन्हाई। क्यो ? क्या इसलिए कि मैं पुकारने मे सक्षम था ? इस रहस्य को अच्छी तरह खोल कर समझा जाऊँगा, इसके बाद चाहे जो भी हो। तुम तो एक दिन बाहर से देखने मे सामान्य से प्रतीत होते थे, किन्तु मैंने तुम्हारे भीतर के असामान्य को बाहर ला दिया है। रस म सराबोर कर मैंने तुम लागो को ऊपर उठाया था। मेरी रसायन साधना का माध्यम आदमी है और इससे अधिक चाहिए भी क्या। ऐतिहासिक महाकव्य की समाप्ति पराजय के महा-श्मशान मे हो सकती है, किन्तु है तो महाकाव्य ही। गुलामी मे दबे हुए अपूण मनुष्यत्व के देश मे मरने की तरह मरना भी सौभाग्य है।'

'भैया, मेरे जैसे अकाल्पनिक 'प्रेक्टिवल' व्यक्ति को भी तुमने जवदस्ती खीचकर ताडव नृत्य के मच पर ला खडा किया। जव सोचने लगता हूँ तो रहस्य का ओर छोर नही मिलता।'

'मैं कगाल की तरह भीख नहीं माँगता, इसीलिए तुम लोगो के ऊपर मेरा इतना हक है। माया मे भुलाकर, लोभ दिखा कर मैंने किसी को भी नही पुकारा। पुकारता हूँ असाध्य के भीतर से, फल के लिये नही—पराक्रम की परीक्षा के लिये। मेरा स्वभाव विल्कुल इम्पसनल[१] है। जो निहायत जरूरी है, उसे विना किसी प्रकार की ग्लानि के स्वीकार कर मकता हूँ। इतिहास मैंने पढा है—देखा है कितने ही महान साम्राज्यो को गौरव की गगनचुम्बी चोटी पर चढते, आज वे मिट्टी मे मिल गये है, उनके हिसाव किताव मे न जाने कहाँ से ऋण की एक वडी-सी रकम जमा हो गई थी जिसका भुगतान वे कर नही सके। और यह देश इसीलिये कि मेरा हो, देश है, सौभाग्य के शास्वत अधिकार को पाकर इतिहास के ऊँचे आसन से समस्त उपद्रवकारी ग्रहो की पूजा करता रहेगा, उन पर सिन्दूर एव चन्दन छिडक कर, घण्टा वजा कर। भला, यह कभी सम्भव है। इस काम के लिये किसकी सिफारिश करता फिरूँ। वैज्ञानिक की क्रूर बुद्धि से केवल यही मानता जाऊँगा कि जिसकी मृत्यु के लक्षण स्पष्ट है, उसे मरना अवश्य है।'

'उसके वाद!

'उसके वाद! देश की चरम दुर्दशा मेरे सिर को नीचे नही झुका सकेगी, मैं उससे कही अधिक ऊपर रहूँगा—आत्मा को

---

१ अव्यक्तिगत, सावजनिक।

शोक से आकुल होने ही नही दूगा, मृत्यु के समस्त लक्षणो को भी देखकर।'

'और हम लोग ?'

'तुम लोग क्या बच्चे हो ? सागर के बीचाबीच जिस जहाज के पेंदे मे सात छेद हो गये हैं, रो-धोकर मन्त्र पढकर, भगवान की दुहाई देकर क्या उसको बचा सकोगे ?'

'यदि बचा नही सके तब ?'

'तब क्या ! तुम इतने आदमियो ने सब कुछ जान-बूझ कर ही डूबते हुए जहाज पर तूफान की दिशा मे मजबूत पाल तान दिया है। तुम्हारे कलेजे कापते नही। इस प्रकार के जितने भी डूबने वाले हैं, उन्ही के सहयोग मे तो हमारी विजय भी निहित है। जिस देश ने अन्धो की तरह रसातल जाने की तैयारी कर ली है, उसी के मस्तूल पर तुमने अन्त तक विजय-ध्वजा फहराई है, न तुमने व्यथ की आशा की है न भीख मागी है, और न निराश होकर तुमसे क्रन्दन ही किया है। जहाज मे जल भर जाने पर भी उसके पतवार को तुम्हे नही छोडना है। पतवार को छोडने मे ही कायरता है—बस, मेरा उद्देश्य पूरा हो गया है—तुम्हारे जैसे कुछ आदमियो के मिल जाने से। उसके बाद ? 'कमण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।' '

'तुमने जो कुछ भी कहा है, उसमे एक जरूरी बात छूट गई है, ऐसा प्रतीत होता है।'

'कौन-सी बात ?'

'क्या तुम्हारे भीतर क्रोध नही है ? क्या तुम इतने 'इम्पसनल' हो ?'

'क्रोध किसके ऊपर ?'

'अंग्रेजो के ऊपर।'

'शराब के नशे के बगैर जिनकी आखो मे सुर्खी नही आ सकती, हथियार तक नही चला सकते, ऐसे कमीनो को मैं तुच्छ समझता हूँ। क्रोध की स्थिति मे कर्त्तव्य की अपेक्षा अकत्तव्य की ही अधिक सम्भावना रहती है।'

'ठीक है, किन्तु क्रोध के कारण के उपस्थित होने पर भी क्रोध न करना अमानवीय है।'

'पूरे योरोप मे मैं परिचित हूँ। मैं अंग्रेजो को भी जानता हूँ। पश्चिम की प्राय सभी जातियो मे उनका स्थान श्रेष्ठ है। दुश्मन को वे मार नही सकते, ऐसी कोई बात नही, किन्तु उसे धूलि मे नही मिला सकते, इसमे वे लज्जा करते हैं। वे डरते हैं जवाबदेही से, अपने से बडो के प्रति खरखवाह बनने के लिये। इससे वे अपने को भी ठगते हैं और उन्हे भी ठगते हैं। उनके ऊपर जितना क्रोध करने से फुल-स्टीम[1] तैयार की जा सकती है, उतना क्रोध मेरे लिये सम्भव नही।'

'तुम अद्भुत हो!'

'मार की चोट से वे इस राष्ट्र के मेरुदण्ड को सदा के लिये सोलहो आने तोड सकते थे किन्तु वे ऐसा नही कर सके। मैं उनकी मनुष्यता की दाद देता हूँ। दूसरे के देश पर शासन करते करते उनकी मनुष्यता नष्ट होती जा रही है, इसीलिये भीतर से उनके विनाश के लक्षण स्पष्ट दिखाई देने लगे हैं। विदेशो का इतना अधिक बोझ और किसी जाति के कन्धो पर नही है, इससे उनका प्रकृत रूप नष्ट होता जा रहा है।'

---

१ पूर्ण वाष्प—सम्पूर्ण शक्ति।

इस बात को वे समझेगे। किन्तु तुमने अपने अध्यवसाय को निरुद्देश्य और निष्कारण प्रमाणित किया है—भले ही यह मेरे लिये छोटे मुँह बडी बात हो।'

'बिल्कुल गलत, मैं अन्याय नही करूँगा, उन्मत्त नही बनूगा, देश को देवी समझ कर माँ-माँ सम्बोधन द्वारा अश्रुपात नही करूँगा, फिर भी काम करूँगा, और एकमात्र इसी पर मेरा अधिकार भी है।'

'शत्रु को शत्रु समझ कर उससे द्वेष नही करोगे तो उस पर प्रहार कैसे करोगे ?

'रास्ते के जड पत्थर पर जिस प्रकार हथियार चलाया जाता है—बिना किसी प्रमाद के। वे अच्छे हे या बुरे, यह तर्क का विषय नही। उनका शासन विदेशी शासन है, उसने भीतर से हमे खोखला बना दिया है। इस अप्राकृतिक स्थिति मे देश को मुक्त करने के लिये प्रकृत मानव स्वरूप को ही पर्याप्त समझता हूँ।'

'किन्तु सफलता के सम्बन्ध मे तुम्हारी निश्चित आशा नही ?

'न रहे, तब भी अपने सस्कार को अपमानित नहीं होने दूँगा—यदि परिणामस्वरूप सबसे आगे मृत्यु ही दिखाई पडे तब भी नहीं। यदि हार की भी आशका हो तो हठपूर्वक उसकी उपेक्षा कर आत्ममर्यादा की रक्षा करनी पडेगी। मैं तो यहाँ तक मानता हूँ कि हम लोगो के लिये अब एकमात्र यही अन्तिम कर्त्तव्य है।'

'वह देखो, आगये रक्त-गङ्गा बहाने वाले भगीरथ। उनको जरा चाय पिला आऊँ। पुलिस को तो सारी सूचना दी ही जा चुकी है। तुम्हारे दल के बेवकूफ छोकरे कही मुझे निगल न जायें।'

* * *

द्वितीय अध्याय

पीठ की ओर तकिया लगाकर पाव पर-पाँव चढाये एला आराम कुर्सी पर बैठी एकाग्रमन से लिख रही है। कापी पर देशबन्धु का चित्र है, वह काठ के बोर्ड पर रखी हुई है। सन्ध्या निकट है फिर भी बाल सँवारे नही गये है। शरीर पर बगनी रग की खादी की साडी है, उसमे मैल छिप जाता है, अतएव अकेले मे घर पर व्यवहार के लायक है। कलाई मे लाल रग की एक जोडी शख-चूडियाँ हैं गले मे सोने का हार है। हाथी-दाँत-सी गोरी देह कसी हुई है। देखने पर मालूम पडता है कि उम्र कम है किन्तु मुद्रा पर गाम्भीर्य अकित है कमरे के एक कोने मे लोहे की एक छोटी-सी चारपाई है जिस पर हरे रग की खादी की चादर बिछी हुई है। मेज पर नारायणी स्कूल की तात की बनी हुई शतरजी बिछी हुई है। एक तरफ छोटा-सा ब्लाटिंग पड है, उसके बगल मे कलम एव पेंसिल से सजा हुआ एक कलमदान है, दूसरी ओर पीतल के पात्र मे गधराज का फूल रखा हुआ है। दीवार पर किसी जमाने का, पतली और पीली रेखाओ मे विलीन होता हुआ, एक फोटो टगा हुआ है। अधेरा हो गया, बत्ती जलाने का समय आ गया। अभी उठने ही को थी कि खद्दर के पर्दे को सरका कर तेजी से कमरे मे प्रवेश करते हुए अतीन्द्र ने पुकारा, 'एली !'

एला ने आल्हादित होकर कहा, 'असभ्य कही के, विना सूचना दिए इस कमरे मे आने का साहस करते हो !'

एला के पैरो के पास मेज पर तपाक से बैठते हुए अतीन ने

कहा, 'जिन्दगी बिल्कुल थोडी है, कायदे-कानून बहुत बडे हैं। नियम के अनुसार चलने लायक लम्बी आयु थी सनातन युग के मान्धाता की। कलिकाल मे तो उस पर खीचातानी चल रही है।'

'अभी तक मैंने कपडे नही बदले।'

'ठीक ही तो है। इस पोशाक मे मेरे साथ मेल खाओगी। तुम रहोगी रथ पर और मैं चलूगा पैदल—इस प्रकार की विषमता मनु के धर्म के अनुसार पाप है। कभी मैं खालिस बडा आदमी था, तुम्ही ने तो उसका अन्त कर दिया है। वर्तमान वेषभूषा देखती हो, कैसी है?'

'नियमत इसे वेषभूषा नही कह सकते।'

'तब क्या कहते ह?'

'खोजने पर शब्द नही पाती। मालूम पडता है कि भाषा मे ऐसा कोई शब्द ही नही है। कुर्ता के ठीक सामने जो यह टेढा-मेढा पैबन्द ह, क्या यह तुम्हारी सिलाई का ही लम्बा-चौडा विज्ञापन ह?'

'भाग्य की चोट गहरी लगने पर भी सीना ताने रहता हूँ—यह उसी का परिचय है। इस कुर्ते को दर्जी को देने की हिम्मत नही पडती, इसे भी तो आत्म-सम्मान का ज्ञान है।'

'मुझे क्या नही दिया?'

'जिसने नवयुग के निर्माण का भार अपने ऊपर लिया है, उसके ऊपर पुराने कुर्ते का दायित्व?

'इस कुर्ते को पहनने की ऐसी कौन-सी जरूरत थी?'

'जिस जरूरत से भले आदमी अपनी पत्नी को नही छोडते।'

'इसका मतलब?'

'मतलव, मेरे पास एक से अधिक कुर्त्ता नही !'

'क्या कहते हो अन्तु ! तुम्हारे पास एकमात्र यही कुर्त्ता है, और नही !'

'वढा कर कहना अन्याय है, इसीलिए मैंने कम वताया। आश्रम मे प्रवेश करने के पहले श्रीयुत अतीन्द्रबाबू के पास नाना प्रकार के अनेक कुर्ते थे। इसी समय देश मे वाढ आई। तुमने वक्तृता मे कहा, 'इस अश्रु-प्लावित दुर्दिनो मे, स्मरण है 'अश्रु-प्लावित' विशेषण ? बहुसख्यक नर-नारी के पास लज्जा-रक्षा तक के लिए कपडे नही, ऐसे समय मे आवश्यकता से अधिक कपडे जिनके पास है, उन्हे लाज लगनी चाहिये।' यह सब तुमने बहुत सुन्दर लहजे मे कहा था। उस समय तुम्हारे सामने खुल कर हँसने का साहस नही था लेकिन मन-ही-मन हँस पडा था। ठीक-ठीक जानता था कि तुम्हारे वक्से मे जरूरत से अधिक कपडे है। किन्तु औरतो के पास पचास रङ्ग के पचास कपडे रहने पर भी पचासो अत्यन्त आवश्यक हैं। उस दिन देश-हितैषिणियो मे होड मची थी, कौन कितना दान सग्रह कर सकती है। अपने कपडो से भरी हुई पेटी मैंने तुम्हारे पैरो के पास रख दी। खुशी के मारे तुम करतल-ध्वनि कर उठी थी।'

'यह कैसी वात है ? मुझे क्या पता था कि तुम अपना सवस्त्र दे दोगे।'

'तुम्हे आश्चर्य क्यो होता है ? इस देह मे क्षति-साधन की दुर्जय शक्ति का सञ्चार किसने किया ? यदि गणेश मजुमदार पर सग्रह का दायित्व रहता तो उसके पौरुष से मुझे थोडे से कपडो की क्षति उठानी पडती।'

'छी छी अन्तु, तुमने मुझे बताया क्यों नही ?'

'अफसोस मत करो। ऐसी कोई वात नही। दो कुर्त्तों को रङ्गवाकर दैनिक व्यवहार के लिए रख छोडा है। उन्हे वारी-वारी से साफ कर पहनता हूँ। और भी दो कुर्त्ते है इस्त्री किए हुए। उन्हे आपत्ति-काल के लिए रख छोडा है। यदि इस सन्देही ससार को कभी उच्च वश का परिचय देना पडा तो उन्ही दो कुर्त्तो को धोबी और दर्जी की सनद मिली है।'

'तुम्हारे इस चेहरे पर ही सृष्टिकर्त्ता ने भद्र-वश की सनद दे दी है, गवाह बुलाने की जरूरत नही पडेगी।'

'प्रशसा! नारी के दरबार मे प्रशसा की अत्युक्ति चिरकाल मे ही पुरुषो के अधिकार मे है, तुम उसे उलट देना चाहते हो?'

'हा, चाहती हूँ। प्रचार करना चाहती हूँ कि आधुनिक युग मे नारियो का अधिकार बढ चला है। पुरुष के सम्बन्ध मे भी सत्य बोलने मे कोई रुकावट नही है। नये साहित्य मे दिखाई पडता है कि बगाली महिलाये अपनी ही प्रशसा के कौशल प्रदर्शित कर रही है। देवी की मूर्ति गढने का दायित्व जो कुमारो पर था, उसे अपने ऊपर ले लिया है। अपनी ही जाति की गुण-गरिमा के ऊपर काव्य का रङ्ग चढा रही हैं। यह भी उनकी शृङ्गार-चर्य्या का एक अङ्ग है, जिसे स्वय उन्होने तैयार किया है, विधाता ने नही। इससे मुझे लाज लगती है। चलो, बैठक मे चलें।'

'इस कमरे मे भी बैठने की जगह है। मैं तो अकेला हूँ, कोई सभा तो होनी नही।'

'अच्छा, बोलो, जरूरी बात क्या है?'

'अचानक कविता का एक चरण स्मरण हो आया है। इसे कहा पढा है, किसी तरह भी स्मरण नही कर पाता। सुबह से ही परेशान हूँ। लाचार होकर तुमसे पूछने आया हूँ।'

'बात तो बहुत जरूरी मालूम पडती है। अच्छा, कहो।'

'जरा सोचकर बताओ कि किसकी रचना है—

'चमक पडी तेरी आँखो मे
प्रतिमा मेरे सवनाश की।'

'किसी विख्यात कवि की रचना तो नही मालूम पडती।'

'क्या यह पहले सुनी हुई कविता की तरह नही मालम पडती?'

'परिचित स्वरो का थोडा-थोडा आभास मिलता है। बाकी पक्तियाँ क्या हो गई?'

'मुझे विश्वास था कि बाकी पक्तियाँ तुम्हे स्वय याद आ जायेगी।'

'तुम्हारे मुँह से यदि एक बार सुन लूँ तो अवश्य याद आ जायेगी।'

'तब सुनो—

गो-धूलि के अरुण राग मे
'रजित सध्या चत्रमास की,
चमक पडी तेरी आँखो मे
प्रतिमा मेरे सवनाश की।'

अतीन के सिर पर हल्की-सी चपत लगाते हुए एला ने कहा, 'आजकल तुम पर कैसा पागलपन सवार हो गया है?'

'चैत की उस शाम से पागलपन सवार है। वे सारे दिन जो समय से पहले ही अन्त हो जाते है, अपनी छायामूर्ति को लेकर कल्पना-लोक की क्षितिज-रेखा पर भटकते-फिरते हैं। मेरा मिलन तुमसे मरीचिका के उसी अभिसार मे हुआ था, आज

उसी मे तुम्हे पुन ले जाने के लिए आया हूँ, कोई और काम करने नही दूँगा।'

काठ के बोड और कापी को मेज पर रखती हुई एला ने कहा, 'मेरा काम रुका रहे। जरा बत्ती तो जला दूँ।'

'नही, रहने दो, प्रकाश प्रत्यक्ष को सामने लाता है। आओ, अँधेरे रास्ते पर भटकते हुए, अप्रत्यक्ष की ओर चल पडे। चार वर्षा से कुछ कम हुए होगे। मोकामा घाट पर स्टीमर से गङ्गा पार कर रहा था। उस समय की पैतृक सम्पत्ति थोडी-सी बची हुई थी पर ऋण के बोझ मे लदी हुई। तबियत पहले ही की तरह शौकीन थी। शरीर पर रेशमी कुर्त्ता था, और कन्धे पर चपेती हुई मूँगिया चादर। फस्ट क्लास की 'डेक' पर, बेत की आराम कुर्सी डाले अकेला बैठा था। अखबार के पन्ने हवा के झाके मे इधर-से-उधर उड रहे थे। देखने मे मजा मिलता था, मालूम पडता था जैसे जनश्रुति मूर्तिमती होकर इतस्तत नृत्य कर रही हो। तुम जनसाधारण के बीच आचल को कमर मे लपेट डेक पैसेन्जर पर खडी थी। अचानक तुम मेरे सामने आ गई। आज भी मेरी इन आखो पर तुम्हारी किशमिसी रङ्ग की साडी प्रतिबिम्बित है। जूडे के साथ पिन के सहारे गोदा हुआ सिर का अँचल मुख के दोनो बगल हवा के कारण फूल उठा था। चेष्टापूर्वक सकोच दूर हटाते हुए तुमने प्रश्न किया—'आप खद्दर क्यो नही पहनते ?'—याद है न ?'

'अच्छी तरह। तुम अपनी मन की प्रतिमा से हूँकारी भरवा सकते हो। मैं तो प्रत्यक्ष हू, बदसूरत हूँ।'

'मैं आज उसी दिन को दुहराऊँगा, तुम्हे सुनना ही होगा।'

'सुनूँगी क्यो नही। जहाँ मेरे नवजीवन की छाया है, वही तो मेरा मन बार-बार लौट कर जाना चाहता है।'

'तुम्हारा कंठ-स्वर सुनते ही मेरा सारा शरीर झंकृत हो उठा। वह स्वर मेरे हृदय मे रोशनी की तरह गूँज उठा, जैसे आकाश मे उडते हुए किसी पक्षी ने एक ही झपट्टे मे अतीत के मेरे सारे अस्तित्व को छीन लिया हो। बिना जान-पहचान की एक औरत की मामूली बातो पर यदि मैं क्रोध कर सकता तो नौका इस तरह कुघाट पर नही लगती। भलेमानुसो के ही बीच अन्त तक जीवन व्यतीत कर सकता था। मन गीली दियासलाई की काठी की तरह क्रोध की आग से जला नही। स्वाभिमान मेरे चरित्र का सबसे बडा गुण है, इसीलिये तुरत ताड गया कि रमणी मुझे विशेषरूप से पसन्द नही करती तो इस तरह की धमकी देने नही आती। खादी-प्रचार, तो एक बहाना मात्र था। सच है कि नही, बोलो!'

'अरे, कितनी बार तो कह चुकी हूँ—बहुत देर से डेक के एक कोने मे बैठ कर तुम्हारी ओर टकटकी बाधे देख रही थी। आपे मे नही थी। पता नही था कि इन आखो की चोरी और किसी की नजरो मे पडती है या नही। मेरे जीवन का वह सबसे बडा आश्चय है पहली नजर मे ही प्रेम। मन ने कहा—'कहा से आ गया वह परदेशी, परिवेश की रूप-रचना से भिन्न, शैवाल मे *शतदल पद्म की तरह।' उसी समय मैंने मन-ही-मन प्रतिज्ञा की* 'इस दुर्लभ व्यक्ति को खीच लाना होगा, केवल 'अहम्' के निकट नही 'वयम्' के भी निकट।'

'मेरे दुर्भाग्य से तुम्हारा एक वचन मे प्रयुक्त होने वाला प्रेम बहुवचन के नीचे दब गया।'

'और कोई चारा नही था अन्तु। द्रौपदी को देखने के पहले ही कुन्ती ने कहा था, 'तुम सब मिलकर बाँट लेना।' तुम्हारे

आने के पहले ही देश के आदेश को मान कर चलने की शपथ ली थी कहा था 'मैं अपने लिये कुछ भी नही रखूँगी।' देश के सामने मैं वचनवद्ध थी।'

'तुम्हारा शपथ-ग्रहण करना अधार्मिक था। ऐसी शपथ की रक्षा भी स्वधम के प्रति विद्रोह है। शपथ यदि तोड देती तो सत्य की रक्षा होती। जो लाभ पवित्र है अथवा अन्तर्यामी के आदेश की तरह है, उसे तुमने दल के पैरो तले रादवाया है। इसकी सजा तुम्हे भुगतनी ही पडेगी।'

'अन्तु, सजा का अन्त नही है, दिन-रात भुगत रही हूँ। जो सौभाग्य सब तरह की साधनाओ के परे है, जो विधाता का अयाचित दान है, वह मेरे सामने आया, तब भी उसे ग्रहण नही कर सकी। अन्तर के कोने-कोने म कठिन गाठे पडी हुई है, भगवान करे, इतना वडा दु सह वधव्य किसी नारी के भाग्य मे न पडे। मैं किसी जादू की नौका मे बैठी थी, तुम्हे देखत ही उत्कठा जग पडी, इच्छा हुई, नौका टुकडे टुकडे हो जाये। तुम्हे देख कर मन मे ऐसी प्रतिक्रिया होगी, कभी अनुमान तक नही किया था। वह नही सकती कि उसके पहले मन विचलित ही नही हुआ था, स्वाभिमान ने मन की चचलता को दवाया था। उसी विजयी स्वाभिमान का आज अन्त हो गया है, जान-बूझ कर हार गई हूँ। बाह्य आचरण से मेरी परख मत करो, मेरे अन्तर को टटोल कर देखो। मैं सचमुच हार गई हूँ। तुम भी हो, मैं तुम्हारी वन्दिनी हूँ।'

'मैं भी अपनी उसी वन्दिनी के सामने हार गया हूँ। [illegible] पूर्णाहुति नही हुई है, हर घडी लडता हूँ, हर [illegible]'

'अन्तु, फर्स्ट क्लास की डेक पर जब तुम [illegible]

दिखाई पडा था, उस समय भी मेरे भीतर दम्भ उछल रहा था। थड क्लास की टिकट को नवयुग की साम्यता की निशानी मानती थी। अन्त मे, तुम रेलगाडी के सकेंड क्लास के डिब्बे मे सवार हुए। मेरे मन-प्राण को तुमने उस डिब्बे की ओर आकर्षित किया। उस समय एक चतुराई सूझी। मन मे आया, गाडी चलने पर तुम्हारे डिब्बे मे सवार हो जाऊँगी और कहूँगी, 'जल्दबाजी मे गलती से चढ गई।' काव्यशास्त्र मे अब तक नारिया ही अभिसार करती आई है। यह समाज के व्यवहारिक प्रचलन मे नही है, इसीलिए काव्य-कल्पना का उद्रेक वजना की विपरीत दिशा मे हुआ। कवियो की दबी हुई टेढी-मेढी इच्छाएं अज्ञात अन्तर के अधेरे मे ठोकर खा-खा कर भटकती फिरती है। उनकी अभिव्यञ्जना नारियो के अन्त करण की सच्ची छवि होने पर भी वे लाज के पर्दे के बाहर उघारना नही चाहती। किन्तु तुमने अनावृत करवा लिया ह।

'क्यो अनावत किया ?'

'नारी-जाति के घूघट को हटा कर एकमात्र स्वीकृति ही तो दे सकी हूँ, और तो कुछ नही दे सकी।'

अचानक अतीन एला की कलाई को पकड कर जोर से दबाने लगा और बोला, 'क्यो नही दे सकी ? मुझे ग्रहण करने मे कौन-सी बाधा थी ? समाज ? जाति-भेद ?'

'छी छी, ऐसी बातें मन मे भी न लाओ। बाहर से एक भी रुकावट नही थी, केवल भीतरी रुकावट थी।'

'पूरी तरह से प्यार नही करती ?'

'पूरी तरह' शब्द निरथक है। अतु, जो शक्ति अपने हाथो पवत को नही ढा सकती, उसे दुबल कह कर बदनाम करना घोर

पाप है। शपथ के कारण आवद्ध थी। यदि उससे मुक्त रहती तो भी शायद विवाह सम्भव नहीं था।'

'क्यो ?'

'क्रोध मत करो अन्तु ! प्रेम करती हूँ इसीलिए सकोच है। मैं दरिद्र हूँ, आखिर तुम्हे दे ही क्या सकती हूँ।'

'साफ-साफ बोलो।'

'अनेक बार बाल चुकी हूँ।'

'फिर से बोलो, आज सब कहना-सुनना समाप्त कर देना चाहता हूँ। इसके बाद फिर नही पूछूँगा।'

'बाहर से किसी ने पुकारा, 'दीदी !'

'कौन ? अखिल, अन्दर क्यो नही आ जाते।'

लडके की उम्र सोलह या अट्ठारह होगी। जिद्द एव दुष्टता से भरे हुए चेहरे पर रौनक है। बाल अस्त-व्यस्त एव घुँघराले है। शरीर का रङ्ग सांवला है। दोनो चचल आँखे चमक रही ह। खाकी रङ्ग का पट पहने ह, उसी रङ्ग की कमर तक की कमीज है, जिसके बटन खुले हुए ह। पैंट की दोनो जेब बेकार की चीजो से भरी हैं। कमीज की ऊपर वाली जेब मे हिरण के सीग की छुरी है जिसमे विचित्र फलक लगे है। कभी वह खेलने के लिए नौका बनाता है तो कभी हवाई जहाज का मॉडल। हाल ही मे मलिक आयुर्वेदिक कम्पनी के बगीचे मे पानी खीचने की हवाई मशीन देख आया है। बिस्कुट के टिन वगैरह नाना प्रकार की और दूसरी फालतू चीजो का जुगाड कर उसी मशीन का माडल बनाने मे व्यस्त है। अगुली कट गई है, उस पर कपडा बँधा हुआ है। इस मातृ-पितृहीन बालक के साथ गत्ता कोई दूर का रिश्ता था। वह उसके उत्पातो का बर्दाश्त

लेती थी। किसी के पास से अखिल एक छोटा-सा बन्दर खरीद लाया था। बन्दर रसोई-घर से खाने का सामान चुराने मे एक नम्बर उस्ताद था। एला के छोटे से परिवार मे ऐसे जानवर का रहना अत्याचार था।

कमरे मे घुसते ही अखिल ने लज्जापूर्वक एला को चरण छूकर प्रणाम किया। एला समझ गई कि यह प्रणाम किसी विशेष काय का द्योतक है, क्योंकि अखिल के लिए भक्ति-वृति स्वभाव-सिद्धि नही थी।

एला ने कहा, 'अपने अन्तु दादा का प्रणाम नही करोगे ?'

किसी तरह का जवाब न दे अखिल अन्तु की ओर पीठ किये चुपचाप खडा रहा। अतीन जोर से हँस पडा। अखिल की पीठ पर हल्का थप्पड लगाते हुए बोला, 'शाबास ! सिर यदि झुकाना ही है तो किसी देवी के चरणो मे। उसी एकेश्वरी के चरणो मे मेरा सिर भी नत है, इस समय प्रसाद के हिस्से के लिए क्रोध मत करो भाई !'

एला ने अखिल से कहा, 'तुम्हे जो कहना है, कह डालो।'

अखिल ने कहा 'कल मेरी माँ का मृत्यु दिन है।'

'ठीक ही तो कहते हो ! मैं तो एकबारगी भूल गई थी। किसी को श्राद्ध मे निमन्त्रण करना चाहते हो ?'

'किसी को नही।'

'तब क्या चाहते हो ?'

'पढने से तीन दिनो की छुट्टी।'

'छुट्टी लेकर क्या करोगे ?'

'खरगोश के लिये पिंजरा बनाऊँगा।'

'तुम्हारे पास तो अब एक भी खरगोश नही रह गया है, पिंजरा किसके लिए बनाओगे ?'

अतीन ने हँसकर कहा, 'खरगोश तो कल्पना से भी बन सकता है। असली काम है, पिंजरा बनाना। मनुष्य अनित्य है, आता और जाता है, किन्तु उसके लिए पिंजरा बनाने का भार भगवान मनु से लेकर उनके आधुनिक अवतार तक ने लिया है। ऐसे काम मे उनका मन लगता है।'

'अच्छा अखिल, जाओ तुम्हारी छुट्टी है।'

और कोई बात न कह कर अखिल वहा से दौडता हुआ चला गया।

'बीच में तीसरा पक्ष है। नही तो हम दोनो अब तक हरि-हर वन को चले गये होते। छोडो उस बात को। अब बताओ, मुझे अलग करने के बारे मे तुम्हारे पास कौन-सी कैफियत है ?'

'एक सीधी सी बात तुम क्यो नही समझते ? उम्र में मैं तुम से बडी हूँ।'

'क्योकि मैं भी यह सीधी-सी बात नही भूल सकता कि तुम्हारी उम्र अट्ठाईस है और मेरी उम्र अट्ठाईस से कुछ महीने अधिक। इसे प्रमाणित करना बिल्कुल सरल है, क्योकि किसी की दलील ताम्र पत्र पर ब्राह्मी लिपि मे नही लिखी गई है।'

'तुम्हारी उम्र अट्ठाईस है और मेरी उससे बहुत अधिक हो गई है। इस उम्र मे तुम्हारे भीतर यौवन की ज्वाला निर्धूम जल रही है। अभी भी तुम्हारे दिल की खिडकी किसी के लिए— जो अनागत है, अभावित है खुली हुई है।'

'एली, तुम मेरी बातो को किसी तरह भी समझना नहीं चाहती, इसीलिए समझ भी नही रही हो। दल के सामने प्रकृति के सत्य के विरुद्ध तुमने प्रतिज्ञा की है, इसीलिए नाना प्रकार के तर्क के आवरण मे तुम स्वय को भुला रही हो और मुझे भी।

भले ही भुलाओ, भरमाओ किन्तु यह बात अपनी जबान मे मत निकालो कि मेरे जीवन से अनागत एव अभावित दूर है। क्या चिरकाल के लिए उसकी ओर हृदय का वातायन खुला रहगा ? इस शून्य के भीतर क्या मेरे ही आत्त स्वर बजता रहेगा 'मैं केवल तुम्हे चाहता, तुम्हे' और दूसरी ओर से इसका प्रत्युत्तर नही मिलेग ?'

'प्रत्युत्तर नही मिलेगा, ऐसी बात क्यो कहते हो, कृतघ्न! तुम्हारे अतिरिक्त इस विषय मे मुझे और कुछ नही चाहिये। जिस समय मिलने से मनोकामना पूरी होती, उस समय मुलाकात जो नही हुई। किन्तु तब भी कहती हूँ—भाग्य मे नही लिखा है।'

'क्यो ? उससे नुक्सान क्या होता ?'

'मेरा जीवन साथक होता, आखिर उसका मूल्य ही कितना है! तुम जो किसी के समान नही हो, तुम अन्यतम हो। दूर हूँ, इसीलिये तो तुम्हारे अलौकिक प्रकाश की झलक पाती हूँ। अपने जैसे तुच्छ व्यक्तित्व को अर्पित कर तुम्हारे विराट व्यक्तित्व को बाधने की जब कल्पना करती हूँ तो डर जाती हूँ। मेरे छोटे-से ससार मे जहाँ प्रतिदिन मेरी तुच्छता अङ्कित होती, तुम अवरुद्ध हो जाते। तुम कितनी ऊँचाई पर दिखाई पडते हो, इस बात को कैसे समझाऊँ। नारिया अपने जीवन की नगण्य सासारिकता का बोझ देकर तुम्हारे जैसे पुरुषो के भी जीवन का दबा देने मे नही हिचकती। इस प्रकार की स्त्रियाँ प्रमाण रूप मे उद्धृत की जा सकती हैं, उनकी वजह से ट्रेजडी भी कम नही हुई है। आँखो के सामने देखा है लता के जाल मे लिपट कर वृक्ष के विकास का रुक जाना। ठीक उसी तरह नारियाँ

भी समझती हैं कि पुरुष को कुटिल जाल मे लिपटा लेने भर से उनका काम बन जाता है। उनके लिए इतना ही पर्याप्त है।'

'एला, जिसे मिलता है, वही समझता है कि पर्याप्त किसे कहते हे।'

'अपने को धोखा नही देना चाहती अन्तु। प्रकृति ने हमारा आजन्म अपमान किया है। हम लोग इस ससार मे जीव-विज्ञान के सत्य सकल्प को लकर उतरी है। साथ मे जीव-प्रकृति द्वारा सगृहीत अस्त्र एव सिद्ध किया हुआ जश भी मिला ह। हम उन्हे ठीक से प्रयोग मे लाकर आसानी से अपना सिंहासन ले सकती है। साधना के क्षेत्र मे पुरुष को अपनी श्रेष्ठता प्रमाणित करनी पडती है। वह श्रेष्ठता क्या है? इसे जानने का सुयाग मुझे मिला है। पुरुष हम लोगो की अपेक्षा बहुत ऊँचे ह।'

'सिर से भी ऊँचे?'

'हा सिर से भी ऊँचे। प्रकृति का अतिक्रमण कर बडे होने का तोरण-द्वार वही मस्तिष्क है। मुझ मे बुद्धि-विवेक पर्याप्त रहे या न रहे, मैं नम्र बनकर निवेदन कर सकी हूँ ऊपर की ओर देखकर ही।'

'किसी नीच ने उत्पात नही किया?'

'किया है। किन्तु उन लोगा ने जा हम लोगो के आकर्षण से जीव-विज्ञान के निचले तल्ले पर उतर जाते हे। किन्तु उन्हे घृणित बनकर नष्ट भी हो जाना पडता है। व्यक्तिगत विशेष इच्छा या प्रयोजन के न रहने पर भी पुरुष का नीचे खीच लाने के लिए हम लोगों ने साधारण-सा षडयन्त्र किया है—साज-सज्जा, हाव-भाव एव मीठी बोली द्वारा।'

'मूर्खों को ठगने के लिये?'

'हा, तुम सभी मूख हो। साधारण मन्त्र प्रयोग से ही ठगे जाते हो। इसीलिए तो हमे गव भी है। हम नारियो ने मूर्खों से

प्यार किया है, तब भी उनकी स्थूल मूर्खता की चोटी पर हमने सूर्योदय देखा है। पुरुष प्रकाश का वाहक है, नारी पुजारिणी। अनेक नीच प्रकृति के निंदको को भी देखा है और देखा है कुत्सित कृपणो को। उनकी समस्त दुर्बलताओ, को मान लेने पर भी उनके व्यक्तित्व मे बहुत कुछ बच जाता है जो विमल है, आभा से आच्छन्न है। ऐसे अनेक व्यक्ति स्मरणीय भले ही न बने किन्तु उनमे महानता अवश्य है।'

'ऐली, तुम्हारी बाते सुनकर लाज लगती है। बिना प्रतिवाद *किये जी नही मानता। फिर भी तुम्हारी बाते अच्छी ही लगती* है। किन्तु सच्ची बात मे तुम से हार नही मानूँगा। अपने देश के पुरुषो मे जन्म मे ही कायरता के लक्षण देखने आया हूँ। इसने मुझे समय-समय पर चिन्तित भी कम नही किया है। उसे तुम्हारे सामने आज व्यक्त करूँगा। मैंने अपने परिचित परिवारो मे सासो का बहुओ पर असह्य अत्याचार देखा है। इस देश मे सास का बहू पर अत्याचार चिर प्रचलित रहा है।'

'हाँ, यह तो जानती हूँ, अपने घर मे भी देखा है। जो व्यक्ति हड्डी से दुबल है, वह निबला के लिए यम के समान है।'

'एला, ऐसी बाते कहकर तुम अपनी भावी सास की निन्दा की भूमिका न डालो। नववधू के ऊपर अमानुषिक अत्याचार की बाते मैं अक्सर सुना करता हू और अत्याचार की नायिका सासो को भी यदा-कदा देखता हूँ। किन्तु सास को निरकुश शासन करने का अधिकार दिया है किसने ? उन माताओ के *लालो ने ही तो। अत्याचार से जो अपनी विवाहिता की रक्षा* नही कर सकता, वह विवाह का अधिकारी कैसे ? जहाँ पुरुष दुर्बल है, वही स्त्रियाँ भी नीचे उतर आती है और नीचता की

ओर अग्रसर होने लगती है। आजकल अपने देश मे देखता हूँ कि जो लोग बडे है, वे कुछ करने का सङ्कल्प लेने के पहले नारी का परित्याग करते है। ऐसे कायर नारियो से डरते है। इसीलिए तुमने इन कायरो के देश मे विवाह न करने की प्रतिज्ञा की है। कही पीछे चलकर तुम्हारे नारीत्व के प्रभाव से किसी का कोमल मन भरमा न जाये। जो यथाथ मे पुरुष है, वे यथार्थ नारी के प्रभाव से ही अपनी शक्ति को व्यञ्जित कर सकते है —विधाता ने हम लोगो के खून मे इस प्रकार का हुक्मनामा लिख दिया है। जो भाग्य के लेख को व्यथ करना चाहता है, उसमे भी साथकता नही। परीक्षा का भार था तुम पर। तुमने मेरी परीक्षा क्यो नही ली ?'

'अन्तु, मैं तक कर सकती थी किन्तु तुम्हारे साथ तक नही करूँगी। क्योकि मुझे मालूम है कि तुमने क्षुब्ध होकर ऐसा तर्क उपस्थित किया है। मेरी प्रतिज्ञा की बात किसी तरह भी भूल नही पाते।'

'नही कदापि नही। तुमने ही कहा है, पुरुप महान होते ह, स्त्रियाँ उन्हे लघु बना देगी। किन्तु यह केवल भय है। स्त्रियो को बडी होने की आवश्यकता नही, वे अपनी सीमा के भीतर ही सम्पूण होती है। अभागा पुरुष महान नही है, वह अपूर्ण है। उसे बनाकर सृष्टिकर्त्ता लज्जित है।'

'अन्तु, उस अपूर्ण के भीतर भी हम विधाता की इच्छा को देख पाती है।'

'एली, विधाता की केवल इच्छा ही बडी है, इसे मैं नही कह सकता, उसकी कल्पना भी किसी प्रकार छोटी नही। इस कल्पना की तूलिका का स्पर्श नारियो की प्रकृति पर हुआ है।

नारियो ने कलाकार को कला का उपजीव्य दिया है। रङ्ग, स्वर, देह, मन, प्राण सबो के द्वारा उन्होने अनिर्वचनीय को प्रकाशित किया है। यह शक्ति का स्वाभाविक धर्म है, इसीलिये यह सरल नही। तुम्हारे शख की तरह चिकने कठ मे सोने का हार कितना भला लगता है, इसके लिए तुम्हे पुस्तको को नही रटना पडा होगा। ऐसी अभागिन नारियाँ भी है जो अपने जीवन लोक मे रूप-सृष्टि द्वारा रस-सचय नही कर पाईं किन्तु सोने का मोटा बाला पहन कर गृहिणी के पद पर अधिष्ठित होगईं, नही तो दासी बनकर आँगन बुहारना पडता। ससार मे ऐसी हय स्त्रियो की कोई सीमा सख्या नही है।'

'सृष्टिकर्ता को ही दोष दूगी। उन्होने नारियो को लडाई करने की शक्ति क्यो नही दी। वचना का सहारा लेकर उन्हे अपनी रक्षा क्यो करनी पडती है? पृथ्वी भर मे सबसे हीन काम 'स्पाई'[१] का है। पुस्तको मे नारी-चरित्र की इस विशेषता को पढकर मैंने भगवान से प्रार्थना की कि वह मुझे सात जन्मो मे भी स्त्री न बनाये। मैंने पुरुष को नारी की आखो से देखा है, इसलिए केवल अच्छाई ही देख पायी हूँ, केवल उनकी महानता ही आँखो के सामने आई है। जब मैं देश के बारे मे सोचने लगती हूँ तो मेरा ध्यान इन सोने के टुकडे जैसे तरुणो की ओर ही खिच जाता है। मेरे लिये वे ही देश है। उनकी भूल मे भी बडप्पन रहता है। यह सोचकर कलेजा फटने लगता है कि उन्हे अपने कक्ष मे स्थान नही दे पाई। मैं उन्ही की मा हूँ, उन्ही की बहन हूँ, उन्ही की पुत्री हूँ,। अग्रेजी पढी-लिखी स्त्रियाँ अपने को सेविका कहने मे लजाती हैं। किन्तु मेरे सम्पूर्ण हृदय से आवाज

---

१ जासूस।

उठती है कि मैं उन लोगो की सेविका हूँ, सेवा मे ही मेरी सार्थकता है। हम लोगो के प्रेम की पराकाष्ठा—यही भक्ति-भावना है।'

'ठीक ही है। तुम्हारी उस भक्ति के पात्र अनेक पुरुष है, किन्तु मेरे प्रति भक्ति क्यो ? भक्ति न होने पर भी मेरा काम चल सकता है। नारियो के विभिन्न रूपो—मा, बहन, पुत्री—को जो तुमने व्यक्त किया है, उनमे मुख्य रूप छोड दिया गया है। शायद मेरे ही दुर्भाग्य से ऐसा हुआ है।

'तुम्हे अपने बारे मे जितना मालूम है, उससे कही अधिक मैं जानती हूँ, अस्तु। मेरे आदर के छोटे-से पिंजरे मे तुम्हारे डैने दो दिनो मे ही छटपटाने लगते। मेरे पास तृप्ति का जो सामान्य उपकरण है, वह तुम्हे एक दिन लघुता की ओर ले जाता। उस समय तुम्हे मेरी अकिंचनता का पता चलता। इसीलिये मैंने अपना सारा अधिकार हटा लिया है, तुम्हे सम्पूर्ण रूप से देश के हाथो सौप दिया है। वहा स्थान की कमी के कारण तुम्हारी शक्ति शोक सतप्त नही होगी।'

ममस्थल पर चोट लगी। अतीन की दोनो आखे जल उठी। वह कमरे के एक कोने-से दूसरे कोने तक चहलकदमी करने लगा। उसके बाद एला के सामने खडा होकर बोला, 'तुम्हे कडी बातें सुनाने का अवसर आया है, मैं पूछता हूँ देश के हाथो अथवा अन्य किसी के हाथो मुझे सौपने का तुम्हे क्या अधिकार है ! तुम अपने माधुर्य्य को सौप सकती थी। वह तुम्हारी अपनी सम्पत्ति है। उसे सेवा कहो या वरदान जो तुम्हारी इच्छा हो। उसके लिए अहकार करने के लिए कहोगी तो अहकार करूगा, नम्र बनने के लिए कहोगी तो नम्र बनूँगा। परन्तु अपने दान

के अधिकार को तुम अत्यन्त छोटे दायरे मे क्यो देखती हो ? नारी-महिमा के आन्तरिक ऐश्वय को छिपाकर मुझे देश को सौंप रही हो। देश को एक हाथ मे रखकर दूसरे हाथ को घुमाया-फिराया नही जा सकता।'

एला के चेहरे का रङ्ग उतर गया। बोली, 'क्या कहते हो ? मैं ठीक-ठीक नही समझ पाई।'

'मैं कहता हूँ जिस माधुर्य्य-लोक के केन्द्र मे नारी है, वह देखने मे भले ही छोटा लगे, अन्तर मे उसकी गम्भीरता असीम है। वह पिंजरा नही है किन्तु देश का नाम लेकर, जिसके भीतर तुमने मेरा डेरा स्थिर किया है, दूसरो के लिये चाहे जो भी हो, मेरे लिये तो पिंजरा के ही समान है मेरी अपनी शक्ति पूण प्रकाश न पाकर छटपटाने लगती है, विकृत हो जाती है। असल मे जो अपना नही, उसे अपना कहने के पागलपन से लजाता हूँ। बाहर निकल भागने की उत्कठा जगती है पर दरवाजे बन्द पाता हूँ। जानती नही कि मेरे पख टूट गये है, पैरो मे बेडी पड गई है। अपने वास्तविक देश मे उसे पाने का मेरा अधिकार था, उसे लेने की ताकत भी थी। तुमने इस सच्चाई पर पर्दा क्यो डाल दिया है ?'

रुधे हुए गले से एला ने कहा, 'आखिर तुम भ्रम मे क्यो पड गये ?'

'तुम लोगो मे भरमा देने की अमोघ शक्ति है। ऐसी बात नही होती तो भूल करने पर लाज लगती है। मैं हजारो बार यही कहूगा कि तुम मुझे भरमा सकती हो। यदि तुम्हारे प्रभाव से मैं अपने को भुला नही देता तो अपने पौरुष पर सन्देह करता।'

'यदि यही बात है तो तुम मुझे फटकारते क्यों'

'क्यो ? यही बात तो मैं भी कहता हूँ। भुल तुम मुझे वही ले जाओ जहाँ तुम्हारा अपना सर अधिकार है। दल के चरित्र की तुमने नकल भर की है, तुम कई आदमियो ने मिलकर नक्ली रास्ते की खोजभर की है। इस शान बधे सरकारी कर्त्तव्य-पथ की धूल खाते खाते मेरा जीवन स्त्रोत सूख रहा है।'

'सरकारी कर्त्तव्य ?'

'हाँ, तुम लोगो के स्वदेशी कर्त्तव्य के जगन्नाथ का रथ। मन्त्र पढनेवाले ने कहा, 'तुम सब मिलकर मोटी रस्सी को अपने कन्धो पर रख लो और दोनो आख बन्द कर रथ को खीचते रहो, बस यही काम है।' हजारो तरुणो ने कमर कस कर रस्सी पकडी। कितने रथ के चक्के के नीचे कुचल गये, कितने जिन्दगी भर के लिए लगडे बन गये। उसी समय उल्टी रथ यात्रा का मन्त्र पढा जाने लगा। लँगडो की हड्डी तो फिर से जोडी नही जा सकती थी, उन्हे धूल के नीचे दबा दिया गया प्रारम्भ से ही शक्ति को विश्वास के नीचे इस प्रकार दबा दिया गया था कि सरकारी मूरत ढालने के साँचे से अपनी ढलाई कराने के लिए लोगो मे होड-सी मच गई। सरदार के रस्सी खीचने पर जब सब-के-सब एक ही नाच नाचने लगे तो तुम्हारे आश्चर्य का ठिकाना नही रहा। इसे ही शक्ति का नृत्य कहते है। नाचने वाला जरा-सा अलग हुआ कि हजारों नर-पुतलियाँ निष्प्राण होकर गिर पडी।'

'अन्तु, उनमे से अनेक ने पागलपन से इधर-उधर पैर रखना शुरू कर दिया था। ताल की रक्षा ही नही हो सकी।'

'पहले से जान लेना चाहिये था कि मनुष्य बहुत देर तक कटपुतली का नाच नही नाच सकता। मनुष्य के स्वभाव का सस्कार किया जा सकता है किन्तु उसमे देर लगती है। यह सोचना भूल है कि स्वभाव को मिटा कर मनुष्य को कठपुतली बनाया जा सकता है। मनुष्य आत्मशक्ति से युक्त एक विचित्र प्राणी है और उसकी सच्चाई इसके बाद नही मिल सकती। मुझ भी वह जीव समझकर यदि तुम स्नेह करती तो उस दल मे न ढकेल कर अपने आप अक मे भर लेती।

'अतु, तुमने शुरू मे ही मुझे अपमानित कर भगा क्यो नही दिया ? मुझे अपराध क्यो करने दिया ?'

'वह तो मैंने बार-बार कहा है। तुम्हारे साथ मिलने की इच्छा हुई थी, सीधी-सी बात है। लोभ दुजय था। आम रास्ता बन्द था। लाचार होकर टेढे-मेढे रास्ते को अपनाना पडा। तुम मुग्ध हुईं। उस भोग के भुगत लेने पर तुम अपने दोनो हाथ बढा कर मुझे पुकारोगी—अपने शून्य हृदय के इद-गिद दिन-रात पुकारती रहोगी।

'मैं मूख की तरह बोलता हूँ, तुम्हे रोमांटिक जैसा प्रतीत होता है, जैसे निराकार वस्तु के पाने का पाना कहने हो। काश, तुम्हारी उस दिन की जुदाई आज के इस बेवस मिलन की थोडी-सी कीमत चुका सकती!'

'अन्तु, आज जैसे वाणी ने तुम्हे अपना लिया है।'

'क्या कहती हो, केवल आज अपनाया है! चिरकाल से ही उसके साथ मेरा सम्बन्ध रहा है। जिस समय नन्हा सा शिशु था, अच्छी तरह कण्ठ नहीं खुला था, उस समय उस मौन अध-कार के भीतर से उपमाओ से लदी, तुलनाओ से भरी, असलग्न

शब्दो से सयुक्त वाणी प्रस्फुटित होती थी। वडा हुआ, साहित्य-लोक मे प्रवेश किया। देखे, इतिहास की हर राह पर नगरो एव साम्राज्यो के भग्नावशेष, वीरो के बिखरे हुए रण परिधान, भग्न विजय—स्तम्भो की दरार से निकलते हुए वट के दरख्त —अनेक शताब्दियो के नाना विधि प्रयास धूल मे मौन। काल की मौन राशि के ऊपर वाणी का अटल सिंहासन दिखाई पडा। उसी सिंहासन के पैरो तले युग-युगान्तर की लहरे टकराती है। अनेक दिनो तक कल्पना करता रहा कि उस सिंहासन के स्वण स्तम्भो को अलकृत करने का दायित्व लेकर इस ससार मे आया हूँ। तुम्हारा अन्तु चिरकाल से वाणी द्वारा अपनाया हुआ पुरुष है। उसे किसी दिन ठीक से पहचान सकोगी, यह आशा बेकार है। उसे तो तुमने अपने दल के शतरज की गोटो मे भरती कर लिया है।'

चौकी से उत्तर कर एला ने अन्तु के चरणो पर अपना सिर रख दिया। अतीन ने उसे उठाकर अपने पास बैठाया। कहने लगा, तुम्हारी इस आभरणहीन देह को मैंने मन-ही-मन शब्दो के आभूषण से सजाया है। तुम मेरी सञ्चारिणी—पल्लविनी लता हो। तुम मेरी 'सुखमितिवा दुखमितिवा' हो। मेरे चारो ओर वाणी का अदृश्य वितान तना हुआ है। साहित्य की अमरावती से उतर कर इसने मुझे समस्त पार्थिव पीडनो से मुक्त रखा है। मैं चिर स्वतन्त्र हूँ इस बात को तुम्हारे मास्टर साहव जानने है। फिर भी मेरे ऊपर विश्वास क्यो करते है—पता नहीं।

'इसीलिए विश्वास भी करते है। लोगो के साथ मिलने के लिए उनके स्तर तक तम्हे नीचे उतरना पडता है। तुम किसी

तरह भी नीचे नही उतर पाते। मैं भी इसीलिए विश्वास करती हूँ। दूसरी नारी अन्य किसी पुरुष पर इस तरह विश्वास नही कर सकती। यदि तुम साधारण पुरुष होते तो मैं साधारण स्त्री ही की तरह तुम से डरती। तुम्हारे साथ मैं निभय हूँ।'

'धिक्कार है उस निभयता को। भय से ही तुम पुरुष को प्राप्त करती। देश के लिए दु साहस का अधिकार जताती हो, अपने व्यक्तित्व के लिए उस दु साहस का प्रयोग क्यो नही करती? मैं कायर हूँ। समय रहते ही तुम्हारी असम्मतियो की परवाह न कर तुम्हें छीन ले जाता। भद्रता! वह तो प्रेम की बर्बरता को लेकर राह बनाने भर के लिए है। पगला निझर शहरी नल की तरह पोस मानने वाला पानी नही है।'

एला ने शीघ्रता से उठते हुए कहा, 'चलो अन्तु, कमरे के अन्दर चले।'

अतीन खडा होकर कहने लगा, 'भय! इतने दिनो के बाद अब भय शुरू हुआ है। मेरी जीत हुई। पहले-पहल जब तरुणाई आई थी, नारी को पहिचान नही सका था। कल्पना के भीतर उसे दुगम समझ कर दूर से ही देखता था। प्रमाण देने का समय नही रहा। जो तुम लोग चाहती हो, वह मैं भी चाहता हूँ। भीतर से मैं पुरुष हूँ—बबर, उन्मत्त। यदि अवसर नही चूकता तो तुम्हे अभी, इस घडी अपने वक्ष-बधन मे बाँध लेता, तुम्हारी पसलियो की हड्डियाँ कडकडा उठती। तुम्ह सोचने का समय नही देता, रोने लायक नि श्वास भी तुम्हारे भीतर नही रहने देता। निष्ठुर की तरह खीचते हुए तुम्हे अपने अभिसार की राह ले जाता। आज जिस रास्ते पर आ पडा हूँ, वह छुरे की धार की तरह पतली है, इस पर दो आदमियो के अलग-बगल चलने की जगह नही है।'

'मेरे चोर ! निकालना नही पडेगा, लो यह लो, यह लो।' कहती हुई एला ने अपनी दोनो भुजाओ को अतीन की ओर बढा दिया, बाहुपाश मे बाधते हुए अपने मुख को अतीन के मुख से सटा लिया।'

खिडकी से रास्ते को आर देखकर एला चौक पडी, 'सब मिट्टी हो गया ! वह देख रहे हो !'

'क्या कहती हो, देखे !'

'वहा, मोड पर। अवश्य ही वह बट्ट ह, इधर ही आ रहा है।'

'आने लायक जगह वह पहचानता है।'

'उसे देखते ही मेरा शरीर सकुचित हो जाता है। उसका स्वभाव बडा गन्दा है। जितनी ही उसे अलग रखने की चेष्टा करती हूँ, उसे दूर-दूर रखना चाहती हूँ। उतना ही वह निकट आता जाता है। अपवित्र, अपवित्र है यह मनुष्य।'

'मैं भी उसे पसन्द नही कर सकता, एला।'

'कभी कभी यह सोचती हूँ कि उसके सम्बध मे ऐसी हीन भावना अन्याय हे। अपने को शान्त करने की कोशिश करती हूँ किन्तु किसी तरह भी सफल नही हो पाती। उसकी ललचाई आँखें दूर से ही अपने कामुक स्पश से मेरा अपमान करती है।'

'उससे इस प्रकार घृणा मत करो एला। उसके अस्तित्व को एकबारगी ठुकराया नही जा सकता।'

'भय के कारण वह मेरी कल्पना से सटा रहता है। उसके भीतर का चेहरा घिनौने मकडे जैसा प्रतीत होता है। मालूम पडता है, अपने अन्दर से आठो पैर निकाल कर मुझे एक दिन अपमान के जाल मे लिपटा लेगा। एकमात्र इसी षडयन्त्र मे परेशान रहता है। इसे तुम मेरी स्त्री-जनित आशङ्का समझ कर हँसी उडा सकते हो किन्तु इस भय ने मुझे भूत की तरह जकड लिया है। केवल अपने लिए ही नही तुम्हारे लिए भी डरती हूँ।

मुझे अच्छी तरह मालूम है कि उसकी ईर्ष्या सांप के फन की तरह फुफकार मार रही है।'

'एला, ऐसे कीड़ा मे साहस नही होता, केवल दुर्गन्ध रहती है इसी वजह से उसे मीडना भी नही चाहता। किन्तु भीतर ही-भीतर मुझसे डरता भी कम नही है। इसलिए नही कि मैं भयंकर हूँ, बल्कि इसलिए कि मैं परम स्वतन्त्र हूँ।'

'देखो अन्तु जीवन मे मैंने अनेक दु ख-विपद की आशङ्का की है, उसके लिए प्रस्तुत भी हूँ। किन्तु किसी दुर्योग से उसके मुख मे पड़ने की अपेक्षा मौन ही अच्छी होगी। तुम्हारे हाथ को दृढता से पकड़ पाती तो मेरा अभी ही उद्धार हो जाता। जानते हो अन्तु हिंस्र जानवरो द्वारा अपमृत्यु की कल्पना जब-तब मन मे उठती है, उस समय देवता से मनाती हूँ कि भले ही बाघ भालू का शिकार हो जाऊँ किन्तु किसी भी दिन मगर के मुह मे न पड़ूँ।'

मैं बाघ भालू की श्रेणी का हूँ क्या ?

'नही, नही तुम मेरे नरसिंह हो, तुम्हारे हाथो मरना मुक्ति सुन्दर है। पैरो की आवाज सुनो। मालूम होता है, वह ऊपर चढ आता।'

अतीन्द्र ने कमरे से बाहर निकल कर जोर से कहा, 'बट्टू ! यहाँ नही, चलो, नीचे के बैठकखाने मे।'

बटु ने कहा, 'एला दीदी ' ।

'एला दीदी अभी अपने कपडे बदल ...नीचे।'

'कपडे बदलने ! इतनी देर से ! सा...

'हाँ, हाँ मेरे कारण ही देर हो गई ।

'एक बात है। केवल पाँच मिनट ...

'वे स्नानघर मे गई हैं। इस कमरे मे आना उन्हे पसन्द नही।'

'आप ?'

'मुझे छोडकर।'

वटु ने ओठो को टेढा बनाकर व्यग्य हास्य किया। बोला, 'हम लोग सदा ही व्याकरण के साधारण नियमो की श्रेणी मे रहे और दो दिनो के भीतर ही आप आप-प्रयोग की श्रेणी मे आ गये। एक्सेप्सन[1] पिच्छल रास्ते का आश्रय है, क्षण भगुर होता है— कहे देता हूँ ' कहते हुए शीघ्रतापूर्वक वह उतर कर चला गया।

हाथ मे एक छोटी-सी कटार झुलाते-झुलाते अखिल आया और उसने अन्तु से कहा, 'चिट्ठी।' वह अपने काम को अधूरा छोडकर आया था।

'तुम्हारी दीदी की चिट्ठी है क्या ?'

'नहीं आपकी। आपके ही हाथ मे देने के लिए कहा है।'

'कौन ?'

'पहचानता नही।' कहकर वह चला गया।

चिट्ठी के लाल कागज को देखते ही अन्तु को यह समझते देर न लगी कि किसी खतरे का सिग्नल है। गुप्त भाषा मे लिखा था, 'एला के घर मे और नही। उससे विना कुछ कहे अविलम्ब चले आओ।'

कम के जिस अनुशासन को स्वीकार कर चुका था, उसको ताडना अतीन के लिए अपना ही अपमान था। पत्र को नियमत टुकडे-टुकडे कर फेक दिया। क्षणभर के लिए मौन बना रहा। तत्पश्चात् शीघ्रतापूवक बाहर आया। रास्ते पर खडा हाकर एक बार कोठे की ओर देखा, बाहर से आराम कुर्सी का एक अश दिखाई पडा और उसी से सटा हुआ लाल-पीले डोरो से बुने हुए चौकोर तकिये का एक कोना। छलाग मार कर अतीन चलती हुई ट्राम गाडी पर चढ गया।

* * * *

---

१ अपवाद।

तृतीय अध्याय

हल्की, गाढी, पीली एव भूरी हरियाली के आवरण मे एक-दूसरी से सटी हुई झाडियो की गलबहियाँ मे प्रसुप्त निविडता, सडे हुए बास के पत्ता की पाक से भरा हुआ गढा। उसके बगल से गुजरती हुई टेढी-मेढी डगर, बैलगाडी के चक्को से क्षत-विक्षत बनी हुई। ओल, कन्दा एव मानकच्चू आदि के पौधो के बीच-बीच मे सेहूँड का बेडा। हरे धान के खेतो की क्यारी मे झलकता हुआ पानी। गङ्गा-तट पर पहुँच कर डगर का अन्त हो गया है। पुराने जमाने की छोटी-छोटी इटा से बना हुआ टूटा-फूटा घाट समय के फेर से एक तरफ झुका हुआ है। नीचे गङ्गा का पानी बहुत पीछे हट गया है। घाट से कुछ दूर आगे जाने पर किनारे की तरफ कोई डेढ सौ वर्षो का पुराना टूटा हुआ मकान है। किम्वदन्ती है कि उस मकान की अभिशप्त छाया मे किसी मातृ-हत्या-पातकी का प्रेत रहता है। अब तक किसी जिन्दे हकदार ने भूत के खिलाफ दावा दायर करने की कोशिश नही की है। दृश्य इसी परित्यक्त खडहर के पूजा दालान का है। उसके सामने काई से भरा हुआ लम्बा-चौडा ऊबड-खाबड आगन है। कुछ ही दूर आगे नदी के तट पर भग्न देव-मन्दिर, टूटे रास-मञ्च और पुरानी चहार दीवारी के भग्नावशेष हैं। बिना डाड-जोड की टूटी हुई नौका बरगद की घनी छाया के नीचे दिखाई पडती है।

इसी दालान मे अतीन का वर्तमान आवास था। दिन के अंतिम प्रहर मे कन्हाई गुप्त वहा आया। अतीन चौक पडा क्योकि यहा का पता कन्हाई की जानकारी मे नही था।

'आप यहाँ !'

कन्हाई ने कहा, 'खुफियागीरी करने आया हूँ ।'

'मजाक को खुलासा कर दे तो अच्छा हो ।'

'मजाक नहीं ! मैं तुम लोगो के लिए रसद पानी जुटाने वाले सेवको मे हूँ । चाय की दुकान मे शनि का प्रवेश हुआ, बाहर निकल पडा । उनकी कुदृष्टि मेरा पीछा करके लगी । लाचार होकर मैंने उनके खुफिया-खाते मे अपना नाम दर्ज करा लिया है । नीमतल्ला घाट[1] जिनके लिये अन्तिम रास्ता है, उनके लिए यह बीहड'पथ-ग्रैंड ट्रक रोड की तरह है । पूरे देश की छाती पर पूव से लेकर पश्चिम तक लम्बायमान है ।'

'चाय बनाना छोडकर आप अब बातें बना रहे हैं ।'

'बनाने से यह व्यवसाय नही चलता । खोटी खबर पहुँचानी पडती है । जो शिकार जाल मे पड जाता है, मैं केवल उसका फन्दा भर खीच देता हूँ । तुम लोगो के रहने की साढे पन्द्रह आने खबर उनको पहुँची, बाकी की पूर्ति मैंने कर दी । वह इस समय जलपाईगुडी की सरकारी अतिथिशाला मे है ।'

'इस बार शायद मेरी बारी हो ?'

'निकट आ गई है । काम को बटु ने बहुत-कुछ आगे बढा दिया मेरे जिम्मे जो कुछ मिलाता है, उसमे तुम्हे समय मिलेगा । पहले वाले डेरे से तुम्हारी डायरी खो गई थी, याद है न ?'

'खूब याद है ।'

'वह पुलिस के हाथ मे निश्चित रूप से पडती । इसी वजह से मुझे चोरी करनी पडी ।'

'आपको !'

---

१ श्मशान घाट ।

'हाँ, जिसका सकल्प सच्चा होता है, उसकी सहायता भगवान करते हे। एक दिन जब तुम उस डायरी मे कुछ लिख रहे थे, मेरे ही कौशल से पाच मिनट के लिये तुम्हे बाहर जाना पड़ा। उसी वक्त मैंने चोरी कर ली।'

अतीन ने सिर पर हाथ रख कर कहा, 'सारी डायरी आपने पढ डाली।'

'इसमे क्या शक है? पढते-पढते रात के डेढ बज गए। बङ्गला भाषा मे इतना तेज है, इसके पहले नही मालूम था। उसके भीतर गोपनीय बातें भी है किन्तु ब्रिटिश साम्राज्य के बारे मे नही।'

'क्या आपने यह अच्छा काम किया है?'

'कितना अच्छा किया है, यह तो नही कह सकता। तुम साहित्यिक हो। पूरी डायरी के भीतर कही भी किसी के नाम का उल्लेख नही है। केवल भाव की दृष्टि से उसके भीतर इतनी घृणा, अश्रद्धा है कि किसी पेन्शन भोगी—मन्त्री-पद-प्रार्थी की कमल से निकलने पर उसे राज-दरबार मे मुक्ति की प्राप्ति होती। बटु यदि तुम्हारा पीछा नही करता तो वही डायरी तुम्हारे ग्रहो को शान्त कर देती।'

'कहते क्या? क्या आपने सारी डायरी पढ डाली है?

'पढ तो जरूर गया हूँ। क्या कहूँ, यदि मेरी कोई लडकी होती और उसकी वजह से तुम्हारी कलम से ऐसी बातें निकलती तो मैं अपने पितृपद को साथक समझता। सच्ची बात कहता हूँ, तुम्हारे जैसे आदमी को दल मे रख कर इन्द्रनाथ ने देश का नुकसान किया है।'

'आपके इस व्यवसाय की बात क्या दल के हर आदमी को मालूम है?'

'किसी को नही।'

'मास्टर साहब को ?'

'वे बुद्धिमान हैं, अन्दाज कर सकते हैं, किन्तु उन्होने मुझ से पूछा तक नही, मैंने भी नही कहा।'

'मुझसे जो उन्होने कहा !'

'यही तो आश्चर्य की बात है। मेरे मत से सन्देहजीवी मनुष्य यदि किसी पर विश्वास नही करे तो उसका दम घुंट जाय। मैं भावुक नही हूँ। मूख भी नही हूँ, इसलिए डायरी भी मेरे पास नही है। यदि मेरे पास रहती तो सौंप कर निश्चिन्त हो जाता।'

'मास्टर साहब '

'मास्टर साहब को खबर दी जा सकती है, मन का भेद नही बताया जा सकता। मैं इन्द्रनाथ का प्रधान मन्त्री हूँ, किन्तु मैं जो उसके सम्बन्ध मे सारी बाते जानता हूँ, इस पर यकीन न करो। कुछ ऐसी भी बातें है जिनका अनुमान करने से भी भय होता है। मेरा विश्वास है कि हम लोगो के दल से जो अपने आप अलग हो जाते हैं, इन्द्रनाथ उन्हे पुलिस के सुपुर्द कर देता है काम तो घृणित है, किन्तु निष्पाप है। कहे देता हूँ कि एक दिन उसकी अथवा मेरी सहायता से तुम्हे हथकडी पहननी पडेगी किन्तु उस समय मन मे किसी तरह की भी दुर्भावना न रखना। तुम्हारे इस घर मे आने की बात बटु ने ही थाने मे बताई है। इसलिए बीच मे मुझे काट मारना पडा। फोटोग्राफ लेकर मैंने उन सबो के पास भेज दिया है। इस समय काम की बात सुनो। तुम्हे चौबीस घण्टो का समय देता हूँ, यदि उसके बाद यहा रहोगे तो मैं स्वय तुम्हे थाने के हवाले कर दूगा। यहाँ से तुम्हे कहाँ जाना होगा, उसका विस्तारपूर्वक रास्ता-घाट वगैरह

यहाँ लिख दिया है– इसके अक्षर तुम्हे ज्ञात है, तब पढकर इसे फाड डालो। देखो इस नक्शे को। रास्ते के इस बगल मे तुम्हारा डेरा है, स्कूल-भवन के कोने का कमरा। उसके ठीक सामने थाना है। उसमे राघव वोयला नामक एक कान्स्टेबल है जो दूर के रिश्ते से मेरा नाती लगता है। तीन पुरुखो से पश्चिम मे ही रहता आया है। बगला-अध्यापक की जगह तुम्हे मिली है। वहाँ जाते ही राघव तुम्हारे ट्रक एव जेब की तलाशी लेगा। जरूरत होने पर एक-दो घूसे भी जमायेगा। उसको भगवान की दया ही समझना। एक बात और, राघव की हिन्दी जबान बगाली जाति को 'साला' विशेपण से सयुक्त कर उच्चरित करती रहती है। तुम उसके प्रतिवाद की जरा भी चेष्टा नही करना, *प्राण रहते इस देश मे लौट कर नही आना।* बाइसिकिल *तुम्हारी* बाहर पडी है। इशारा पाते ही सवार हो जाना। आओ भाई, अन्तिम बार गले मिलले।' गले मिलकर कन्हाई चला गया।

अतीन मौन वना बैठा रहा। उसका अन्तजगत द्वन्द्व से आकुल हो उठा। समय से पहले ही उसके जीवन-नाटक का अन्तिम अक आ गया, यवनिका गिरने ही वाली थी, दीप बुझ रहा था। यात्रा प्रारम्भ हुई थी निर्मल भोर के शुभ्र प्रकाश मे, आज वहाँ से बहुत दूर आ गया था। रास्ता चलते समय जो पाथेय साथ मे लिया था, उसमे से अब कुछ भी अवशिष्ट नही था। बाकी रास्ते भर उसने अपने को केवल धोखा ही दिया है—उसे केवल ठोकरें मिली है। एक दिन अचानक सौदय के अपूव दान को कर मे लिये सौभाग्य लक्ष्मी पथ के निभृत कोने मे दिखाई पडी। उसने ऐसे अलौकिक सौन्दर्य से साक्षात्कार करने की स्वप्न मे भी कल्पना नही की थी। उसका परिकल्पित स्वरूप

काव्य एव इतिहास की रेखाओ मे यदा-कदा प्रतिविम्बित हुआ था। प्रतीत हुआ जैसे सौन्दर्य एव साधक के बीच कविवर दाते का पुनर्आविर्भाव हो। ऐसी ऐतिहासिक प्रेरणा ने उसके अन्तरतम को मुखरित किया था। दाते की ही तरह वह राष्ट्रीय विप्लव के आवत्त मे कूद पडा था। किन्तु उसके भीतर न सत्य था, न वीर्य्य और न गौरव ही। देखते-देखते दुर्निवार वेग से वह पक में निमग्न होता गया। नकाबपोशी एव छद्म आचरण के भीतर चोरी, डकैती, खून आदि के अन्धकार को इतिहास का आलोक स्तम्भ कभी भी मिटा नही सकता। अपना सब कुछ लुटा कर उसे कुछ भी नही मिला, उल्टे निश्चित पराभव के लक्षण दिखाई पडे। पराभव का भी मूल्य है। किन्तु आत्मा के पराभव का नही। जिस पराभव ने खीचकर गोपनचारियो की वीभत्स विभीषिका मे डाल दिया, उसका कुछ अर्थ नही, उसका कहीं अन्त नही।

दिन का प्रकाश धुंधला पड गया। आगन मे झीगुर की झकार सुनाई पडने लगी, कही किसी चलती हुई बैलगाडी से आत्तध्वनि निकल रही थी।

अचानक घर के भीतर वेगपूर्वक एला ने प्रवेश किया। आत्म हत्या के लिये जिस प्रकार मनुष्य जल मे उछल पडता है, उसी अन्धवेग से उसका आगमन हुआ।

अतीन के सम्भलते-सम्भलते उसकी भुजाओ मे वह एक ही छलांग मे आ पडी। रुंधे हुए गले से कहने लगी, 'अतीन, अतीन सम्र नही कर सकी।'

अतीन ने धीरे-धीरे उससे अपने को छुडा कर सामने सहारा दे खडा किया। बोला, 'एली, तुमने कितनी भारी गलती कर दी।'

उसने कहा, 'कुछ नही जानती, मैंने क्या कर दिया।'

'मेरा पता कैसे मालूम हुआ ?'

एला ने मानपूर्वक कहा, 'तुमने तो मुझे बताया नही था ?'

'जिसने तुम्हे बताया है, वह तुम्हारा मित्र नहीं।'

'यह भी मान लेती हूँ, किन्तु इतने दिनो से तुम्हारा कोई पता नही मिल रहा था, मेरा मन व्यग्र हो उठा। विरह-वेदना असह्य हो उठी। शत्रु-मित्र का विवेक नही रहा। कितने दिनो से तुम्हे देखा नही, बालो तो।'

'तुम धन्य हो !'

'तुम धन्य हो अन्तु ! जैसे ही मेरे घर पर जाने की मनाही हुई, तुमने उसे मान तो लिया।'

'वह मेरा स्वाभाविक हठ है। प्रचण्ड इच्छा ने मुझे अजगर की तरह जरा-जला कर पीसा था, तब भी उसे मना नही सका। वे मुझे सेन्टिलमेन्टल[1] कहते हैं। उन्होने मान लिया था कि सकट काल मे मैं गीली मिट्टी की तरह कमजोर साबित होऊँगा। वे अनुमान नही कर सके कि मेरी अमोघ शक्ति सेन्टिमेन्ट+ही है।'

'मास्टर साहब तो इसे जानते हैं।'

'एली, ब्रिटिश साम्राज्यभर मे, इस भूत के अड्डे के निर्माण के बाद से आज तक किसी भी बगाली महिला ने ऐसे भीषण स्थान का अनुमान तक नही किया होगा।'

'इसका कारण है, किसी भी बगाली महिला के सामने मेरी तरह गरज असह्य होकर प्रकट नही हुई थी।'

'किन्तु एली, आज तुमने जो काम किया है वह अवैध है।'

'मानती हूँ इस बात को। अपनी दुर्बलता स्वीकार करती हूँ तब भी नियम तोड़ूगी केवल अपनी होकर नही, तुम्हारी

---

१ भावुक+भावुकता।

होकर भी। प्रतिदिन मेरे मन ने कहा है कि तुम मुझे पुकार रहे हो। उत्तर नही दे पाती, इसलिए प्राण गले मे अटक जाता था। बोलो, 'मेरे आने से क्या तुम खुश हुए हो ?'

'इतना खुश हुआ हूँ कि उसे साबित करने के लिए विपद तक झेलने के लिए तैयार हूँ।'

'नही, नही, तुम विपद क्यो झेलोगे ? जो होगा सो मेरा होगा। तब मैं चलूँ, अन्तु।'

'किसी प्रकार भी नही। तुम नियम तोड कर आई हो, मैं नियम तोड कर तुम्हे रोक रखूँगा। दोनो मिल कर अपराध को बराबर-बराबर बाट लेंगे। नवीन विस्मय के वासन्ती रग मे मैंने तुम्हारे उस मुखडे को देखा था आज वह युगो पीछे की बात प्रतीत होती है। आज उसी दिन का आह्वान किया जाये, इस वीरान खण्डहर के भीतर। आओ, और भी निकट आओ।'

'रुको, घर को थोडा व्यवस्थित कर लूँ।'

हाय ! गजे सिर पर कघी लगाने की चेष्टा।'

एला ने एक बार चारो ओर दृष्टिपात किया। मेज के ऊपर एक कम्बल था, उसके ऊपर चटाई थी। तकिये की जगह पुस्तको से भरी एक कन्वास की थैली थी। पढने-लिखने के लिए एक पैकिंगवक्स था। एक कोने मे पानी का घडा मिट्टी के वर्त्तन से ढका हुआ था। एक टूटी हुई टोकरी मे कुछ केले रखे थे, उसमे एनामेल छूटा हुआ खाने का एक पात्र था, आवश्यकता पडने पर उसमे चाय भी पी जा सकती थी। घर के दूसरे कोने मे एक चौडी सन्दूक थी, उसके ऊपर मिट्टी की एक मूर्ति थी—गणेश की। इससे मालूम होता था कि अतीन के साथ अन्य कोई व्यक्ति भी रहता है। एक खम्भे से दूसरे खम्भे तक रस्सी बँधी

हुई थी। उस पर विभिन्न रङ्गो के अनेक गमछे टँगे थे। घर की नमी मे दुगन्ध थी।

ठीक इस प्रकार का तो नहीं पर इससे मिलता-जुलता दृश्य एला ने इससे पूव भी कई बार देखा था। इससे उसे विशेष कष्ट नहीं हुआ था बल्कि ऐसे त्याग के लिए वह तरूणो की बहादुरी समझती थी। एक दिन जगल के किनारे उसे ऐसा ही दृश्य दिखाई पडा था। कारिख लगा हुआ चूल्हा था, किसी त्यागी ने रसोइ बनाई होगी। उस दृश्य के भीतर उसे राष्ट्र विप्लव का रोमास दिखाई पडा था—अङ्गारो मे विप्लव की छवि अङ्कित थी। किन्तु अतीन की दुरवस्था को देख कर उसे रुलाई आने लगी। आराम की गोद मे पले हुए धनी युवको की अवज्ञा करने का एला को अभ्यास-सा हो गया था किन्तु अतीन की इस अभावपूर्ण दरिद्रता के नग्न रूप को देख कर वह किसी तरह भी अपने मन को भुलावा नही दे सकी।

एला के विकल चेहरे को देखकर अतीन हँस पडा। बोला, 'मेरे ऐश्वय को देखकर तुम्हे आश्चर्य हो रहा होगा। उसका विराट अश नही दिखाई पडता, इसीलिये विस्मित हो। हम लोगो को अपने पैर हल्के रखने पडते हैं। दौडते समय सङ्गी-साथी, वस्तु-सामग्री आदि किसी की पुकार नही सुनाई पडती। यहा से कुछ दूरी पर जूट मिल के मजदूरो का मुहल्ला है। वे मुझ मास्टर बाबू कहते है। मुझसे चिट्ठियाँ पढवाते हैं, पता-ठिकाना लिखवाते है, रसीद दिखाकर अपना देना-पावना समझ लेते है। इनमे से किसी-किसी सतान-वत्सला मा का शौक अपने लडके को मजदूर से हजूर की श्रेणी मे उठाने का रहता है। इसमे वे मेरी सहायता माँगती हैं, फल-फलहरी ला देती है। जिनके घर पर गाय-भैंस है, उनसे दूध भी मिल जाता है।'

'अन्तु, उस कोने मे जो सन्दूक है, उसमे किसकी सम्पत्ति है ?'

'कुजगह मे अकेली पडी हुई चीज आँखो मे खटकती है। दरिद्रता का मारा एक मारवाडी इस खडहर मे आ टपका है। तीसरी बार उसका दिवाला निकला है। मेरा अनुमान है कि दिवायिला बनना ही जैसे उसका व्यवसाय है। यह भग्न दालान उसके दो भतीजो की ट्रेनिंग एकेडमी है। वे सुबह सत्तू खाकर काम पर आते है। देहात की औरतो के लिये सस्ते दाम के कपडे रङ्गते है। बेच कर मूलधन का सूद देते है और असल मे भी कुछ-कुछ अदा करते जाते है। वहाँ जो मिट्टी के गमले दिखाई पडते है, कही मेरे भोजन बनाने के पात्र न समझ लेगा। उनमे रङ्ग घोला जाता है। कपडो को उतार कर वे उस सन्दूक के भीतर रख जाते है। इसके अलावा उस सन्दूक के भीतर गँवई औरतो के श्रृङ्गार के लिए अनेक सामान है—जैसे बेलवारी चूडी, कघी, छोटे-छोटे आइने इत्यादि। रखवाली करने का भार मेरे ऊपर है और इस दालान के भूत पर। तीन बजे जो वे सौदा करने निकलते हैं फिर दूसरे दिन तीन बजे ही लौटते है। वह मारवाडी शायद कलकत्ते मे किसी की दलाली करता है। मैं अँगरजी जानता हूँ, इसलिये मुझे अपने व्यवसाय का साझीदार बनाना चाहता था। जीव-दया की भावना ने मुझे रोक लिया। उसने मेरी आर्थिक अवस्था की खोज भी ली थी। बता दिया है कि पुरखा ने जितनी सम्पत्ति इकट्ठी की थी, उसमे से चौदह आने उन्ही के पुरखो के घर मे जन्मान्तरित हो चुकी है।'

'यहाँ पर तुम्हारी कितने दिनो की मियाद है ?'

'अन्दाज करता हूँ, चौबीस घण्टो की। इस आँगन मे विभिन्न

रङ्गो की रसहीन लीलायें चलती रहेगी किन्तु अतीन्द्र उस पीले रङ्ग की क्षितिज—रखा मे विलीन हो जायेगा। उस मारवाडी को मेरी छूत लग चुकी है, भगवान करे उसे बेडी न पहननी पडे। शायद अभी भी बिना किसी प्रकार की पूँजी लगाये वह मुझे अपना साझीदार बनाना चाहता हो।'

'इसके बाद तुम्हारा पता-ठिकाना क्या होगा ?'

'बताने की इजाजत नही।'

'तो क्या मैं कल्पना भी नही कर सकूगी कि तुम कहा हो ?'

'कल्पना करने मे दोष क्या है ? मानसरोवर के तट को कल्पना के लिए उत्तम क्षेत्र मान सकती हो।'

एला झोली के भीतर रखी हुई पुस्तको को उलट-पुलट कर देखने लगी। काव्य की पुस्तके थी, कुछ अँग्रेजी की—कुछ बगला की।

अतीन ने कहा, 'इतने दिनो तक उन पुस्तको मे ही सब कुछ भुला कर मैंने आश्रय पाया है। उन्ही के शब्द-लोक मे मेरा निवास रहा है। पन्नो का खोलकर पेन्सिल, चिन्हो के सहारे पथ का निर्देश पाओगी। और आज ? यह देखो।'

एला ने अचानक अतीन के पैर पकड लिये। कहने लगी, 'माफ करो अन्तु, मुझे माफ करो।'

'तुम्हे माफ करने लायक मेरे पास है ही क्या ? यदि कही भगवान हो, उसमे दया की भावना हो तो वह मुझे ही माफ कर दे।'

'जिस समय तुम्हे नही पहचानती थी, तुम्हारी पतिच्छवि को इसी पथ पर खडी रहती थी।'

अतीन ने हँसते हुए कहा, 'अपने पागलपन के 'फुल स्टीम' मे इस भयानक स्थान पर आ पडा हूँ। इसका भी श्रेय तुम मुझे नही देना चाहती। नाबालिग समझकर अभिभावक बनना

चाहती हो। मैं इसे बर्दाश्त नही कर सकता। उससे अच्छा है कि मच की ऊँचाई से उतर कर मेरे निकट निम्न धरातल पर चली आओ। मेरे मुख की ओर देखकर बोलो, 'आओ सखे चले आओ, मेरे आधे अचल पर बैठ जाओ।'

'कह सकती थी, किन्तु तुम एकाएक खफा क्यो हो उठे ?'

'खफा नही होऊँगा ? बताया नही कि अपनी कोमल भुजाओ मे लिपटा कर तुमने मुझे दर-दर का भिखारी बना दिया।'

'सच्ची बात कहने से बिगडते क्यो हो ?'

'सच्ची बात हुई ? मैं हृदय के आवेग के कारण रास्ते पर फेक दिया गया हूँ, तुम उपलक्ष मात्र रही हो। अन्य किसी बङ्गाली महिला को उपलक्ष पाकर इतने दिन काले-गोरे क्लब मे ब्रिज खेलने जाना, घुडदौड के मैदान मे गवनर-बॉक्स के सामने स्वर्गारोहण पव की साधना करता। यदि साबित हो जाये कि मैं मूढ हूँ तो मैं जोर देकर कहूँगा कि वह मूढता मेरी है—जिसे भगवद्‌दत्त प्रतिभा भी कह सकती हो।'

'अन्त दुहाई है तुम्हे, आज बक-झक मत करो। तुम्हारी जीविका को मैंने ही डुबाया है, इस दु ख को कभी भी भूल नही सकूगी। देखती हूँ, तुम्हारे जीवन का मूल टूट गया है।'

'इस समय वही नारी प्रकाश मे आ रही है जो रियल[1] है। मामूली बात मे ही पकडी जाती हो, देशोद्धार के मञ्च पर तो तुम रोमाटिक बन जाती हो। इस समय दूध, भात, मछली से भरी ससार रूपी कासे की थाली के केन्द्र मे आदर्श गृहिणी की तरह ताड का पखा झुलाती हुई प्रतीत हो रही हो। पर पोलिटिकल[2] लाठियो की वर्षा के बीच लाल-लाल आखो एव अस्त-व्यस्त बालो वाली कृत्रिम बन जाती हो।

---

१ वास्तविक।

२ राजनीतिक।

'तुम यहाँ तक बढ सकते हो ? अन्तु तुम्हारी बातो के सामने औरतें भी हार मानेगी।'

'औरते भी बाते कर सकती हैं क्या। वे तो केवल बकना जानती है। बातो के 'टर्नेडो'[१] से सनातन से आती हुई मूढता की दीवार तोड़ूँगा, समझ कर ही, मन के भीतर ही तूफानी बादलो को आश्रय दिया था। उस मूढता के ऊपर नारी-जाति के जय-स्तम्भ को खडा करने के लिये निकल पडा था।'

'तुम्हारे पैरो पडती हूँ। स्पष्ट कर दो कि मेरी भूल के कारण तुमने भूल क्यो की ? अपनी जीविका का त्याग क्यो किया ?'

'वह मेरा इशारा भर था, अँग्रेजी मे जिसे जेस्चर[२] कहते है। वह मेरे निदान की भाषा है। यदि दु ख नही मानता तो मुँह फिरा कर चली जाती, किसी तरह नही समझ पाती कि मैं तुम्हे कितना प्यार करता हूँ। इस बात को इस तरह मत कह देना कि वह प्रेम देश के लिए है।'

'इसके भीतर देश को मत घसीटो अन्तु।'

'देश की साधना और तुम्हारी साधना दोनो मिलकर एक हो गई है, इसलिये इसके भीतर देश का अस्तित्व है। किसी दिन वीय का तेज दिखा कर नारी को उपलब्ध करना पडता, आज उसी मरण-प्रतिज्ञा का मैंने वरण किया है। इस बात को भूल कर सामान्य जीविका की बात से तुम्हे चोट पहुँची है। ठीक कहता हूँ न, मेरी अन्नपूर्णा !'

'हम नारियाँ सासारिक होती है। मेरी एक बात तुम्हें रखनी पडेगी। मेरा पैतृक मकान है, बैंक मे कुछ रुपये भी जमा हैं।

---

१ तूफान।
२ सकेत।

दुहाई है, बार-बार दुहाई है, मेरी बात रख लो, रुपये लेने मे सङ्कोच मत करो। जानती हूँ, तुम्हे उनकी अत्यन्त आवश्यकता है।'

'अत्यधिक आवश्यकता पडने पर मैट्रिकुलेशन के लिए नोट-बुक लिखने से लेकर कुलीगीरी तक के काम पडे है।'

'मैं जानती हूँ अन्तु, जमा रुपयो को देश के काम मे लगा देना चाहिये था। किन्तु उपाजन मे अपने को दुर्बल पाकर ही सचय के प्रति अन्ध आसक्ति होती है। हम नारिया कायर होती है।'

'वह तुम लोगो की सहज बुद्धि का कोरा उपदेश है। धन का अभाव नारी के श्री को नष्ट कर देता है।'

'हम लोगो के नीड छोट होते है। उसमे कुछ टुकडे हम जमा करती हैं। किन्तु केवल जीवित रहने के लिये नही, प्रेम करने के लिये। मेरे पास जो कुछ है तुम्हारे लिये, इस बात को समझा सकू तो मेरी खैरियत है।'

'मैं उसे समझने के लिए तैयार नही। आज तक नारियो ने सेवा का सचय किया है, पुरुषो ने जीविका का। उसके विपरीत होने से सिर नीचा होता है। जिस भीख के लिए बेहया बन कर तुम्हारे सामने हाथ पसारा, उसे तुमने प्रतिज्ञा की आड मे छिपा लिया। उस दिन तुम नारायणी स्कूल का हिसाब मिला रही थी। मैं तुम्हारे पास आ बैठा—तूफान के झटके खाकर जिस प्रकार चील धूल मे गिर पडती है उसी तरह। मार खाने की इच्छा लेकर गया था। कर्तव्य की जैसी-तैसी छाप मारी हुई वस्तु के प्रति औरतो की निष्ठा उसी प्रकार स्वाभाविक है जिस प्रकार पण्डो की चरण धूलि के प्रति उनकी अन्ध भक्ति।

इससे उन्हे मुक्त कर देना असम्भव है। तुमने आँख उठाकर भी मुझे नही देखा। बैठे-बैठे एकटक तुम्हारी ओर देखते हुए अभिलापा जगाने लगा कि इन सुकुमार उङ्गलियो से सुधा-धारा बरस कर मन-प्राणो को प्लावित कर दे। ममता नही जगी। कृपण, तुम उतना भी नही दे पाई। मन-ही-मन अन्दाज लगाने लगा, शायद इससे भी अधिक मूल्य देना पडेगा। एक दिन फटा हुआ सिर एव कटी हुई देह लेकर जमीन पर लेट जाऊँगा। उस समय निकलते हुए प्राण को शायद भुजाओ मे भर लोगी।'

एला की आखे डबडबा आईं। बोली, आह! तुमसे हार मानती हूँ। इतना भी बिना मागे नही पा सके? ठोकर मार कर गिरा क्यो नही दिया हिसाब के खाते को? समझते नही कि तुम्हारे ही सकोच के कारण सकुचित रहती हूँ। अन्तु, तुम्हारा स्वभाव एक जगह औरतो जैसा है। इच्छा तो प्रबल करते हो किन्तु उद्दाम भाव से अपनी माँग को व्यक्त करना रुचि के प्रतिकूल समझते हो।'

'वंशगत अभ्यास है। यह मेरे सस्कार के साथ जडित है। सदा से सोचता आया हूँ कि नारियो के शरीर और मन मे एक प्रकार की पवित्रता की मर्यादा है, उनकी देह की मर्यादा की सशकित मन से रक्षा करना पूवजो का अभ्यास-सा रहा है। मेरे कुण्ठित मन को जरा सा भी आश्रय देने के लिए तुम्हारा मन यदि किंचित भी आद्र हो उठे तो मेरी ओर से माग की इच्छा मत करो। मैंने इस तरह मागना सीखा ही नही है। भूख की सीमा नही, इसीलिए पेटू बनना पसन्द करूँ, ऐसी मेरी आदत नहीं। मैं अपनी कामना की कुलीनता को नष्ट करना नही चाहता।'

एला अतीन से सट कर बठ गई, उसके सिर को अपनी छाती

मे छिपा कर उस पर अपना सिर रख दिया। कभी-कभी धीरे-धीरे बालो पर उँगली फेरने लगी। कुछ देर बाद अतीन ने एला की कलाई को मजबूती से पकड लिया। कहने लगा, 'जिस दिन मोकामा के जहाज पर चढा था, उस दिन भाग्यदेवी ने पितामही की तरह मेरे कानो को उमेठ दिया। उसके कुछ ही समय बाद मन स्मृति के आकाश मे मँडराने लगा—आकाश-कुसुम चुनने के लिये। उस दिन की बाते क्या पुरानी हो चुकी है ?'

'जरा भी नही।'

'तब सुनो। नीचे की डेक से भारी माल को उठाकर मेरा बिहारी नौकर गाडी तक ले गया। मेरे साथ केवल चमडे का एक छोटा-सा सूटकेस भर था। इधर-उधर कुली के लिए दृष्टि दौडाता रहा। मेरे पास आकर तुमने कहा, 'क्या कुली चाहिये ? जरूरत क्या है, मैं उसे उठा लेती हूँ। अरे, यह क्या ? कहते हुए तुमने उठा ही लिया। मेरी विपत्ति को देखकर तुमने पुन निवेदन के स्वर मे कहा, 'यदि लाज लगती है तो एक काम करें। मेरा बक्स वहा है, उसे उठा लीजिये ऋणशोध हो जायेगा।' उठाना ही पडा। मेरे सूटकेस की अपेक्षा तुम्हारा बक्स सात गुणा भारी था। हैंडिल को पकड कर कभी बाए और कभी दाहिने हाथ मे बदलते हुए तिलमिलाते-तिलमिलाते रेल गाडी के थर्ड क्लास के डिब्बे तक ले गया। उस समय रेशमी कुर्त्ता पसीने से तरबतर हो गया था। सास जोरो से चल रही थी। तुम्हारे चेहरे पर नि शब्द अट्टहास अङ्कित था। शायद करुणा किसी कोने मे छिपी पडी थी, इसीलिए तुम खुल कर हँस नही रही थी। उस दिन मुझे मनुष्य बनाने का महत्वपूर्ण दायित्व तुम्हारे ही हाथो था।'

'छी छी क्या सुना रहे हो, सुन कर लाज लगती है। पता नही, मुझे क्या हो गया था, कितनी बेवकूफ थी—मैं बेहद। उस समय हँसी को रोक रखने का मेरा हठ था। पता नही, किस प्रकार बर्दाश्त किया। औरतो की बुद्धि नही होती।'

'रहे चाहे न रहे, इससे तो कुछ होता-जाता नही। उस दिन तुम जिस परिवेश के भीतर दिखाई पडी थी, वह 'हायर मैथमेटिक्स'[1] तो नही है, लॉजिक[2] का तक भी नही है। वह है जिसे मोह कहते हैं। शकराचार्य्य जैसे दर्शन के अखाडेवाज तक ने अपने मुग्दर की चोट से उसे टस से मस तक नही किया। उस समय दिन बीत रहा था। आकाश मे सध्याकालीन मेघ दिखाई पडते थे। गङ्गा का जल लाल आभा मे झिलमिल कर रहा था, वही आभरणहीन चपल मांसल शरीर उस रंगीन प्रकाश की पृष्ठ भूमि पर सदा के लिये मन मे अंकित हो गया। उसके बाद क्या हुआ? कानो मे तुम्हारी पुकार सुनाई पडी। किन्तु कहाँ आ गया हूँ, कितनी दूरी पर क्या उसके बारे मे तुम्हे कुछ पता है?'

'मुझे बताते क्यो नही, अतु?'

'निषेध मानना पडता है। केवल यही नही। सब बातो को खोलने से लाभ ही क्या है? प्रकाश कम हो गया है, और भी निकट आ जाओ। एकमात्र तुम्हारे निकट ही मुझे विश्राम मिलता है। आयतन उसका अत्यन्त लघु है, सोने के पानी से रंगे हुए फ्रेम की तरह। उसी के भीतर चित्र को बाँध क्यो नही लेता। वे जो फूलो के एक-दो गुच्छे अलग होकर आँखो पर लटकते रहे

---

१ उच्च अङ्कगणित।

२ तकशास्त्र।

हैं, जिन्हें तुम हाथ से बार-बार हटा रही हो, काले किनारे की टसर की साड़ी, कधे पर ब्रूच[1] नही, अचल सिर के बालो से आबद्ध, आखो मे क्लान्त शोक की छाया, ओठो पर विनय का आभास। चारो ओर से दिन की रोशनी सिमटती आ रही है, सब कुछ अस्पष्ट होता जा रहा है, शून्य के धुंधलेपन मे वह सब कुछ जो मैं देख रहा हूँ। आश्चर्य्य-युक्त सत्य है। इसका अर्थ क्या है, किसी को समझा नही सकता। किसी कुशल कवि की पकड मे न आ सका, इसीलिए इसके अव्यक्त माधुर्य मे इतना गहरा विषाद अकित है। इस छोटी-सी अपरूप पूणता को बडे नाम वाली, बडी छाया वाली विकृति ने घेर लिया है।'

'क्या कहते हो अन्तु!'

'सरासर झूठ। याद है, तुमने कुलियो के मुहल्ले मे डेरा लेने के लिये मुझसे कहा था। तुम मेरे वशगत अभिमान को चूर चूर कर देना चाहती थी। तुम्हारे उस महत्वपूर्ण प्रयास मे मुझे बडा मजा मिला। डेमोक्रेटिक पिकनिक[2] की तैयारी होने लगी। गाडीवानो की बस्ती मे घूमा। खुडो दादा के साथ ग्वालो की बस्ती मे गया। किन्तु उन्होने तो इसे समझ ही लिया, मुझे भी समझते देर नही लगी कि यह सम्पर्क की छाप कडी धूप बर्दाश्त नही कर सकेगी। कुछ आदमियो के स्वर सब यन्त्रों मे बजते हैं—रुई धुनने की धुनकी की तरह। हम लोग जब नकल करना चाहते हैं तो स्वर नही मिलता। देखती नही हो अपने मुहल्ले का ईसाई हर एक को ब्रदर[3] कह कब पुकारता है और

---

१ साडी की पिन।

२ जनतावादी वन भोजन।

३ भाई।

प्रत्येक से गले मिलता है। किन्तु यह उसके दैनिक अनुष्ठान का अङ्ग मात्र है। इससे ईसामसीह का व्यग्य होता है।'

'तुम्हे क्या हो गया है, अन्तु! किस क्षोभ से आतुर होकर ऐसी बात करते हो? क्या तुम कहना चाहते हो कि कर्त्तव्य को कर्त्तव्य नही कहा जा सकता, अरुचि को दवा कर भी।'

'रुचि की बाते नही कहता एली, स्वभाव की बाते कहता हूँ। अत्यन्त अरुचिकर होते हुए भी श्रीकृष्ण ने अर्जुन को वीर के कर्त्तव्य का निर्वाह करने के लिए कहा था। कुरुक्षेत्र मे खेती करने के लिए 'एग्रिकल्चरल इकोनॉमिक्स'[1] की चर्चा उन्होने नही की थी।'

यदि तुम कहते तो श्रीकृष्ण क्या कहते, अन्तु?'

'बहुत पहले ही कानो मे कह गये हैं। कान में कही हुई बात को मुख से व्यक्त करने का भार मेरे ऊपर था। जहाँ व्यक्ति का मूल्य नही होता, वहाँ सबो का एक ही कर्त्तव्य होता है। गुरु महाशय द्वारा कान मे कही जाकर बात मन्त्र बन जाती है। जहा नम्रता के मूल मे अहकार है, वहा तुम्हारा स्थान नही। देवी हो, तुम सब-की-सब देवी हो, नकली है केवल देवी की पोशाक जो औरतो के अन्य आभरणो की तरह पुष्प रूपी दर्जी की दुकान मे निर्मित है।'

'देखो अन्तु, आज तक समझ नही पाई हूँ कि जो तुम्हारी राह नही, उसे छोड क्यो नही देते।'

'तब मैं कहता हूँ। इस पथ पर आरूढ होने के पहले मुझे बहुत-सी बाते नही मालूम थी, अनेक बातें अचिन्त्य थी। एक-एक कर ऐसे युवको को साथ मे पाया जिनसे उम्र मे कम न होने

---

[1] कृषि-अर्थशास्त्र।

पर भी पाँवो की धूल लेता । उन्होने आँखो के सामने क्या देखा है, किनना सहन किया है उनका कितना अपमान हुआ है, ऐसी यातनायें कही भी व्यक्त नही होगी । इसी असह्य व्यथा न मुझे विक्षिप्त बना दिया था । बार-बार मन मे प्रतिज्ञा की थी कि हार नही मानूँगा, पीडाओ से घवडाऊँगा नही, पत्थर की दीवार से सिर टकराकर भले ही मर जाऊँगा पर दीवार की हृदय-हीनता की उपेक्षा ही करता रहूँगा ।'

'उसके बाद क्या तुम्हारा मन बदल गया ?'

'मेरी बातें सुनो । शक्तिशाली को जो ललकारता है, वह निरुपाय होकर भी उसके सामने ही खडा रहता है, उससे उसके सम्मान की रक्षा होती है । उसी सम्मान के अधिकार की मैंने कल्पना की थी । समय ज्यो-ज्यो व्यतीत होता गया, असाधारण प्रतिभा वाले तरुण क्रमश मनुष्यत्व से हीन होते गये । इतना वडा नुकसान और बदले मे कुछ नही । जानता हू, हँसकर मेरी बाते उडा दोगी, क्रोध मे उन्हे विद्रूप कर दोगी, तब भी उन लोगो स कहा है, अन्याय से अन्यायी का मुकाबला करना एक तरह की हार ही है । पराजित होने के पहले उनके सामने यह प्रमाणित कर जाना होगा कि मानव धम के पालन मे उनकी अपेक्षा हम बड थे—नही तो ऐसे वलिष्ट के साथ पराजय का खेल ही क्यो खेलते । क्या बुद्धि-विवेक से हीन होकर आत्म-हत्या करने के लिये ? ऐसी बात नही कि उनमे किसी ने मेरी बातो को नही समझा । पर समझने वालो की सख्या थोडी थी ।'

'तब भी उन्हे छोडा क्यो नही ?'

'अब छोड थोडे ही सकता हूँ । उस समय दण्ड का निष्ठुर जाल जो चारो ओर से डाल दिया गया था । उनके इतिहास का मैंने प्रत्यक्ष दशन किया, उनकी मर्मान्तक वेदना की भाषा

पडी, इसीलिए क्रोध करूँ चाहे घृणा, विपन्नो का त्याग नही कर सकता। किन्तु इस अभिज्ञता मे एक बात पूरी तरह समझ गया हूँ कि शारीरिक शक्ति मे हम जिनके बराबर नही, उनके साथ मल्लयुद्ध करने की चेष्टा करने पर आन्तरिक दुर्गति शोचनीय हो जाती है। रोग सब शरीरो के लिये दुखदाई है किन्तु निर्बल शरीर के लिए घातक है। मनुष्यत्व को अपनाकर कुछ समय के लिए विजय का डका वे ही बजा सकते हैं जिनमे बाहुबल है किन्तु हम लोगो के लिए सम्भव नही। सर्वत्र कलक की कालिमा लग जायेगी, हम सब अपयश के अन्धकार मे विलीन हो जायेंगे।'

कुछ समय से भयकर 'ट्रेजडी का चेहरा मेरे सामने भी स्पष्ट हो गया है, अन्तु। गौरव के आह्वान पर दौड पडी थी। किन्तु प्रतिदिन लज्जा की वृद्धि हो रही है। इस समय हम लोग क्या करें, बताओ।'

'हर आदमी धम-क्षेत्र मे धमयुद्ध कर रहा है। वहाँ मर कर भी तीन लाको को जीत लेने की लिप्सा है। किन्तु हमारे बीच अनेक ऐसे हैं जिनके लिए ऐसी यात्रा की सारी राहे बन्द है। वहा का कमफन वही भुगत लेना होगा।'

'सब कुछ समझती हूँ, अन्तु। कि‍न्तु कुछ दिनो से देश-सेवा की आड बना कर तुम इतना धिक्कारते हो कि हृदय पर आघात पहुँचता है।'

'उसका कारण क्या है, उस बात को इस समय न कहने से भी काम चल सकता है, वह समय अब नही रहा।'

'फिर भी कहो।'

'मैं आज तुम्हारे सामने स्वीकार करूँगा कि जिसे तुम

पेट्रियट[1] कहती हो, मैं वैसा पेट्रियट नही। पेट्रियटिज्म[2] से भी जो बडा है, उस पर आस्था न रख महज देश-भक्ति का नारा लगाना मगर की पीठ पर नदी पार करने का प्रयास मात्र है। मिथ्याचरण, नीचता, परस्पर, अविश्वास की भावना, क्षमता पाने के लिए षडयन्त्र, गुप्तचर वृत्ति आदि सारे कार्य उन्हे कीच के नीचे धँसा देंगे। इसे मैं स्पष्ट देख रहा हूँ। इस गढे के भीतर के कुत्सित ससार की दिन-रात बहने वाली विषाक्त हवा मे सास लेकर मौलिक स्वभाव से पौरुष की रक्षा नही कर सकता जिससे पृथ्वी पर कोई महान काय किया जा सके।'

'अच्छा अन्तु, जिसे तुम आत्महत्या कहते हो, क्या यह केवल हम लोगो के देश के लिए ही सत्य है ?'

'मेरे कहने का मतलब यह नही। देश की आत्मा को मार कर उसके प्राण को बचाया जा सकता है। इस तरह की झूठी बात एकमात्र नेशनलिस्ट[3] ही अपनी पशु-गजना मे ध्वनित कर सकते हैं। उनका प्रतिवाद मेरे हृदय मे असह्य आवेगपूवक उमड रहा है। यदि बोलने की स्वतन्त्रता रहती तो इस बात को कहने से जो लाभ होता, वह तथाकथित देशोद्धार की अपेक्षा श्रेयस्कर होता। पर इस जन्म मे ऐसा अवसर पा ही नहीं सकूँगा। मेरी वेदना आज इसीलिए निष्ठुर बन गई है।'

एला ने दीघ नि श्वास छोडते हुए कहा, 'लौट चलो अन्तु !'

'अब लौटने की राह नही।'

'क्यो नही ?'

---

१ देशभक्त।

२ देशभक्ति।

३ राष्ट्रभक्त।

'यदि कुजगह मे भी पड जाऊँ तो वहाँ का भी दायित्व अन्त तक रहता है।'

एला ने अतीन के गले को पकडते हुए कहा, लौट चलो अन्तु ! इतने वर्षो से जिस विश्वास के सहारे टिकी हुई थी, उसकी नीव हिल गई। आज मैं डूबती हुई नौका मे आत्मरक्षा की मिथ्या आशा कर रही हूँ। मेरा भी उद्धार कर लो। इस प्रकार मौन वन कर मत बैठो। वोलो अन्तु, कुछ बोलो। अभी तुम आदेश दो, मैं प्रतिज्ञा तोड दूँ। मैंने भूल की है। मुझे क्षमा करो।'

'उपाय नही है।'

'उपाय क्यो नही ? अवश्य है।'

'तीर निशाना भले ही चूक जाये तरकश मे वापिस नही आ सकता।'

'मैं स्वयवरा हूँ। मुझसे विवाह कर लो, अन्तु। अव अधिक समय नष्ट नही कर सकती, गान्धव विवाह कर लो। अपनी सहधर्मिणी वनाकर अपनी राह पर ले चलो।'

'विपद की राह होने पर तुम्हे साथ ले चलता। किन्तु जहाँ धम नष्ट हो चुका हो, वहाँ तुम्हे अपनी सहधर्मिणी नही बना सकता। छोडो, इन बातो को छोडो। इस जीवन की नौका-दुघटना के अन्त मे भी सत्य का कुछ अश बाकी है। उसी का वर्णन तुम्हारे मुख से सुनूँ।'

क्या बोलूँ ?'

'वोलो, तुमने प्यार किया है ?'

'हा, किया है।'

'कहो, मैंने तुमसे प्यार किया है, यह वात तुम्हारे मन मे मेरे न रहने पर भी रहेगी।'

एला निरुत्तर बनी बैठी रही। दोनो आखो से अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी। बहुत देर के बाद रुँधे हुए गले से बोली, 'फिर से कहती हूँ अन्तु, मेरे हाथ से कुछ ले लो—लो, मेरे गले का हार।'

यह कह कर उसने हार को अन्तु के पैरो पर रख दिया।

'किसी प्रकार भी नही।'

'क्यो, इतना मान क्यो ?'

'हाँ मान ही सही। ऐसा दिन भी था कि मैं उसे गले मे पहन सकता था, आज उसे दे रही हो भूख मिटाने के लिए ? तुम्हारे हाथ से भिक्षा नही लूँगा।'

एला अतीन के चरणो पर गिरती हुई बोली, 'मुझे अपनी सगिनी बनालो।'

'लोभ मत दिखाओ एला। अनेक बार कह चुका हूँ कि मेरी और तुम्हारी राह एक नही है।'

'तब वह राह तुम्हारी भी नही है। लौट चलो, लौट चलो।'

'राह मेरी नही है, मैं राह का हूँ। गले की फांसी को कोई गले का हार नही कहता।'

'अन्तु, ठीक कहती हूँ, तुम्हारे चले जाने के बाद मैं एक क्षण भी जीवित नही रह सकूँगी। तुम्हारे सिवाय मेरा और कोई नही। यदि इस बात पर तुम्हे सन्देह है, तब भी मेरा निश्वास है मृत्यु के बाद ही सही, किन्तु कोई-न-कोई ऐसी राह अवश्य निकल आयेगी जिससे सन्देह का निराकरण हो जायेगा।'

अचानक अतीन उछल कर खडा हो गया। तीर की तरह दूर से सीटी की तीखी आवाज सुनाई पडी। बोल पडा, 'मैं चला।' एला ने उसे पकड कर कहा, 'कुछ और रुको।'

'नही ।'

'कहां जाते हो ?'

'कुछ नही जानता ।'

एला ने अतीन के पैरो को पकड कर कहा, मैं तुम्हारी सेविका हूं, तुम्हारे चरणो की सेविका, मुझे छोडकर मत जाओ, मुझे छोडकर मत जाओ ।'

कुछ देर तक अतीन खडा रहा । दूसरी वार फिर सीटी की आवाज आई । अतीन ने गरज कर कहा, 'छोड दो ।' अपने को मुक्त करते हुए अतीन तेजी से चला गया ।

उस समय सन्ध्या का अन्धकार घनीभूत हो रहा था । एला मेज पर चित्त लेटी थी । उसका अन्तर शुष्क था, नयन नीरहीन थे । इसी समय गम्भीर गले की आवाज सुनाई पडी, 'एला !'

चकित होकर उठ बैठी । देखा, हाथ में टॉर्च लिये इन्द्रनाथ हैं । उसी समय खडी होती हुई वह बोली, 'अन्तु को लौटा लाइये ।'

'बन्द करो ऐसी बात । यहां क्यो आइ ?'

'विपत्ति की सम्भावना करके ही आई ।'

'डाटते हुए इन्द्रनाथ ने कहा, 'तुम्हारी विपद की बात को समझता हूं । इस स्थान का पता किसने दिया ?'

'बटु ने ।'

'तब भी मतलब नही समझ सकी ?'

'समझने की बुद्धि मैं खो बैठी थी । दम घुट रहा था ।'

'तुम्हे मारना होता तो अभी मार डालता । चली जाओ यहां से घर, बाहर टैक्सी खडी है ।'

* * * *

चतुर्थ अध्याय

'यह क्या अखिल ! तुम फिर बोर्डिंग से भाग आये ! तुम से अब हार मान बैठी । मैंने बार बार कहा है, खबरदार, इस घर मे पैर मत रखना । मर जाओगे ।'

अखिल ने किसी प्रकार का उत्तर न दे धीरे से कहा, 'किसी दाढी वाले ने पीछे की चहारदीवारी लाँध कर भीतर प्रवेश किया है । इसीलिये तुम्हारे इस कमरे का दरवाजा मैंने भीतर से बन्द कर दिया है—सुनो, पैरो की आवाज सुनाई पड रही है !' अखिल अपनी छुरी के सबसे चौडे फलक को निकालकर तैयार हो गया ।

एला ने कहा, 'बहादुर, छुरी खोलने की जरूरत नही । दो, कहती, हूँ, इसे मुझे दो ।' और उसके हाथ से छुरी ले ली ।

सीढी से आवाज आई, 'डरो नहीं, मैं हूँ अन्तु ।' क्षण भर के लिये एला का मुँह पीला पड गया—'दरवाजा खोल दो ।'

दरवाजा खोलकर अखिल ने पूछा, 'वह दाढीवाला कहाँ गया ?'

'दाढी तो खोजने पर फुलवारी मे मिलेगी, किन्तु शेष आदमी को तुम यही पावोगे । जाओ, दाढी की खोज करो ।' अखिल चला गया ।

एला पत्थर की मूर्ति की तरह क्षणभर एकटक देखती हुई खडी रही । बोली, 'अन्तु तुम्हारा चेहरा कैसा हो गया है ?'

अतीन ने कहा, 'क्या सुन्दर नही है ?'

'तब क्या सच्ची बात है'

'क्या सच्ची बात है ?'

'तुम्हे सर्वनाश के व्यामोह ने घर दबाया है।'

'अलग अलग डाक्टरो के भिन्न-भिन्न मत है। विश्वास न करने से भी काम चल सकता है।'

'तमने तो भोजन नही किया होगा ?

'उस वात को छोडो। समय नष्ट मत करा।'

'क्यो आये अन्तु, तुम क्यो आये ? इधर ता तुम्ह पकडने की चेष्टा की जा रही है।'

उन्हे निराश नही करना चाहता।'

एला ने अतीन का हाथ पकडते हुए कहा, 'इस निश्चित *विपत्ति के भीतर तुम क्यो आये ? इस समय उपाय क्या है ?'*

'क्यो आया, इसका उत्तर जाने के कुछ पहले दे जाऊँगा। इस बीच जितनी देर तक सम्भव है, उस बात को भूलने की कोशिश करूँगा। नीचे के दरवाजे जरा बन्द कर आऊँ।'

कुछ देर बाद ऊपर आकर अतीन ने कहा, 'चलो, छत के ऊपर चलें। नीचे के तल्ले के बिजली के सारे बल्ब खोल लाया हूँ। डरने की बात नही।'

दोनो छत पर आये और छत पर आने का दरवाजा बन्द कर लिया। बन्द दरवाजे का सहारा ले अतीन बैठ गया, एला उसके सामने बैठी।

'एला, मन को हल्का बनाओ। मानो कुछ हुआ ही नही, जैसे हम दोनो लकाकाण्ड प्रारम्भ होने के पहले सुन्दर काण्ड मे हो। तुम्हारे हाथ इस प्रकार बर्फ की तरह ठण्डे क्यो हैं ? काँप भी रही हो। दो, उन्हे गर्म कर दू।'

'एला के दोना हाथो को लेकर अतीन ने अपने कुर्त्ते के भीतर

छाती से चिपका लिया। उस समय दूर किसी मुहल्ले मे विवाह की शहनाई बज रही थी।

'डर रही हो एली !'

'भय कैसा ?'

'सब प्रकार का, प्रत्येक क्षण का।'

भय केवल तुम्हारे लिए है अन्तु, और किसी के लिए नही।'

अतीन ने कहा, 'एली कल्पना करो कि हम दोनो पचास या सौ वर्ष बाद आने वाली किसी ऐसी ही रात मे एक साथ बैठे हैं। वर्तमान का दायरा अत्यन्त लघु होता है, उसमे भय-भावना, दु ख, कष्ट आदि विराट रूप मे दिखाई पडते हैं। वर्तमान के छोटे मुह से बडी बातें निकलती हैं। नकाब पहनकर डर दिखाता है जैसे हम क्षण की गोद मे नाचनेवाले शिशु हो। मृत्यु नकाब को खीचकर गिरा देती है। मृत्यु अत्युक्ति नही करती। जिसे बहुमूल्य समझा था, वह कुछ नही बल्कि वर्तमान की चालबाजी थी। उसने मोटे अक्षरो मे अपरिमित मूल्य लिख भरा था।

'विराट समझकर जिससे हरदम हार मानी थी, वास्तव मे वर्तमान ने काला लेबल मार कर उस पर अपरिसीम दु ख लिख दिया था। सब-कुछ मिथ्या है। जीवन जालसाजी है। वह अनन्तकाल के जाली हस्ताक्षर को मनवाना चाहता है। मृत्यु आकर हँसती है, धोखे की दलील का लुप्त कर देती है। वह हँसी निष्ठुर हँसी नही है, विद्रुप की हँसी नही है, मोहरात्रि के गुजर जाने पर शिव के हास्य की तरह शान्त एव सुन्दर। एली, रात के एकान्त मे बैठकर क्या कभी मृत्यु द्वारा प्रदत्त स्निग्ध, गम्भीर मुक्ति का अनुभव तुमने किया है जिसमे विराजमान है शाश्वत क्षमा का मूर्त रूप ?'

एला अतीन के हाथ को अपनी गोद मे रखे चुपचाप बैठी रही। सहसा अतीन हँस पडा। कहने लगा, 'पीछे की ओर मृत्यु का काला पर्दा असीम से सयुक्त हो झूल रहा है। उसी पर जीवन का कौतुकनाट्य अभिनीत होकर अन्तिम अक की ओर क्रमश अग्रसर होता जा रहा है। आज उसी का एक दृश्य ध्यानपूर्वक देखो। आज से तीन वर्ष पहले इसी छत पर तुमने मेरा जन्म-दिन मनाया था, याद है?'

'खूब याद है।'

'तुम्हारे समान विराट परिधि के भीतर सत्य को उद्भासित करने की क्षमता मेरे भीतर रही है अन्तु, तब भी तुम लोगो की बाते यादकर जब अभिभूत हो जाती हूँ, तब इस बात को अनुभव करने की चेष्टा करती हूँ कि मरना सहज है।'

कायर, मृत्यु को पलायन का पथ कह कर उसका तिरस्कार क्यो करते है। मृत्यु सर्वाधिक निश्चित है—जीवन के सारे गति स्त्रोतो का चरम सागर है, समस्त सत्यासत्य, अच्छे-बुरे का पूण समन्वय उसके भीतर हो जाता है। इस रात मे इस समय हम दोनो उस विराट की फैली हुई भुजाओ के वेष्ठन मे हैं। इब्सन की वे चारो पक्तियाँ याद हैं न—

Upwards
Towards the peaks,
Towards the stars,
Towards the vast silence'
(ऊर्ध्व पख कर
शिखर शीर्ष पर,
रे नक्षत्र पर,
उस विराट की मौन मुक्ति पर।)

'तुम्हारे भक्त युवको का दल भी उपस्थित था। भोजन का कोई विशेष आयोजन नही था। चुडा भिगोया गया था, उबाली हुई उडद पर काली मिर्च का बुरादा छिडका गया था, शायद अडे का वडा भी था। सबने मिलकर खूब खाया। अचानक मतिलाल ने हाथ-पैर नचाकर कहना शुरू किया, 'आज नवयुग मे अतीनबाबू का नवजन्म-दिन है' में उछलकर उसके पास चला गया और उसके मुँह पर हाथ रखते हुए कहा, यदि वक्तृता दोगे तो आज तुम्हारा पुराना जन्म-दिन कब्र मे परिणत हो जायगा। बटु ने कहा, 'छी छी अतीनबाबू वक्तृता की भ्रूण हत्या क्या कर रहे हे। नवयुग, नवजन्म, मृत्यु का तोरण आदि उनके रटे-रटाए शब्दो का सुनकर मुझे लज्जा होती है। उन्होने प्राण-पण से मेरे मन के ऊपर अपने दल की तूलिका फेरने की कोशिश की है, किन्तु रग नही पकड सका।'

'अन्तु मैं निर्बोध हूँ, मैंने ही साचा था कि तुम्हे अपने पदातिको के साथ एक ही वर्दी पहना कर शामिल कर लूगी।'

'इसीलिए मुझे दिखा-दिखा कर उनके साथ अपना बहनापा निभाती थी। तुम्हारा अनुमान था कि मेरे सशोधन के लिए ईर्ष्या की भी आवश्यकता है। स्नेह यत्न, कुशल सम्भाषण, विशेष मन्त्रणा, अनावश्यक उद्वेग आदि रङ्गीन मनिहारी वस्तुओ की तरह ह। तुमने उनके सामने अपनी पसारी की दूकान खोल दी थी। आज भी तुम्हारा करुण प्रश्न कान म सुन रहा हूँ, 'नन्दकुमार' तुम्हारे आँख-मुह लाल क्यो है ?' बेचारे भले आदमी के सिर-दद को अस्वीकार करने के पहले ही फटे चिथडे की जल-पट्टी तैयार होकर आ गई। मैं मुग्ध था, तब भी समझता था कि इस अत्यन्त असामयिक बचनापे की तुम्हारे अत्यन्त पवित्र

भारतवर्ष मे सबसे अधिक फरमाइश है। पूर्णतया आदर्श स्वदेशी भगिनी वृत्ति।'

'आह, चुप रहो, चुप रहो अन्नु।'

'उन दिनों तुम्हारे भीतर अनेक व्यर्थ वस्तुओं का बाहुल्य था, जो हास्यास्पद थी—इस बात को तो तुम्हें मानना ही होगा।'

'मानती हूँ मानती हूँ सौ बार मानती हूँ। तुमने ही उन सबो को मिटा दिया है। तब आज इतने निष्ठुर होकर उसकी पुनरावृत्ति क्या कर रहे हो?'

'क्या, मन की पीडाओ से व्यथित होकर बोल रहा हूँ, सुनो। जीविका से भ्रष्ट करने के अपराध के लिए तुमने मुझसे क्षमा मांगी थी। वास्तविक जीवन-पथ से भ्रष्ट हो गया हूँ, इसलिये उस सर्वनाश के बदले जिस वस्तु का दावा करता, *उसका अधिकार* अभी मिटा नही है। मैंने अपने स्वभाव को तोड़ा है कुसस्कार मे अन्धी बनी तुम अपनी प्रतिज्ञा को नही तोड़ सकी जिसके भीतर सत्य का नामोनिशान नही था, इसलिए क्या सिर्फ क्षमा मागना ही यथेष्ठ था। मानता हूँ कि तुम सोच रही होगी कि इतना किस प्रकार सम्भव हुआ।'

'हा अन्नु, मेरा विस्मय किस प्रकार भी कम नही होता—समझती नही, मेरे पास ऐसी कौन-सी शक्ति थी।'

'तुम कैसे जान सकती हो। तुम लोगो की शक्ति अपनी नही होती, महामाया की होती है। तुम्हारे कण्ठ मे कैसा अपूर्व स्वर है जो मेरे मन के असीम आकाश मे ध्वनि की निहारिका सृजन करता है। और ये तुम्हारे हाथ, *ये अँगुलियाँ सत्य-मिथ्या सबके* ऊपर पारस मणि का स्पर्श दे एकाकार कर सकती हैं। जानता नही, किस मोह के वेग से धिक्कार देते-देते बदले मे शून्य

जीवन मे अपमान मिला है। इतिहास मे ऐसी विपत्तियो की कहानी पढ चुका हूँ किन्तु मेरे जैसे बुद्धि-अभिमानी के भीतर ऐसी स्थिति आ सकती है, इसकी कल्पना भी नही थी। आज जाल फाडने का समय आ गया है, इसीलिए तुम्हे सच्ची बातें बताऊँगा। चाहे, उनमे कितनी भी कठोरता क्यो न हो।'

'कहो, कहो, जो कुछ कहना हो, कह डालो! मेरे ऊपर दया मत करो। मैं निमम हूँ, निर्जीव हूँ, मूढ हू— तुम्हे परखने की शक्ति मेरी कभी भी नही थी। जो अतुलनीय है, वही मेरे सामने हाथ फैला कर माँगने आया था, मैं मूल्य नही दे सकी। भाग्य से प्राप्त हुआ धन चिरकाल के लिए लुट गया। इससे भी यदि कोई बडी सजा हो तो मुझे दो।'

'सजा की बाते रहने दो। मै क्षमा ही करूँगा। मृत्यु जिस तरह क्षमा करती, उसी प्रकार की असीम क्षमा। इसीलिये आज आया हूँ।'

'इसीलिए।'

'हा, एकमात्र इसीलिए।'

'क्षमा मुझ तक पहुँचाते ही नही। किन्तु इस तरह आग की लपटो मे घुस आने की जरूरत ही क्या थी? जानती हूँ, मुझे अच्छी तरह मालूम है, तुम अब बचना नही चाहते हो। यदि यही सत्य है तो मुझे इन गिने-गिनाय दिनो के लिए सेवा का अन्तिम अधिकार दो। तुम्हारे पैरो पर पडती हूँ।'

'सेवा मे क्या होगा? फूटे जीवन-घट मे सुधा ढालोगी? तुम नहीं जानती, मेरा क्षोभ किस प्रकार असह्य है। भला, सुश्रूषा से उसका क्या हो सकता है, जिसने कि अपना खो दिया है।'

'सत्य को खोओ मत अन्तु । सत्य तुम्हारे अन्तर मे अनाहत रूप से है ।'

'खो चुका हूँ, खो चुका हूँ ।'

मत कहो, मत कहो, इस प्रकार की बाते ।'

'मैं कौन हूँ यदि पता लग जाता तो तुम सिर से लेकर पैर तक सिहर उठती ।'

'अन्तु, तुम कल्पना द्वारा आत्म-निन्दा को बढा रहे हो। निष्काम भाव से जो तुमने किया है, उसका कलक तुम्हारे स्वभाव पर कभी भी आरोपित नही किया जा सकता ।'

'स्वभाव की ही हत्या कर चुका हूँ, सब प्रकार की हत्या से बढकर पाप । किसी दुश्मन को जड-मूल से मिटा नही सका, केवल अपने को ही मिटा सका हूँ । उसी पाप के कारण तुम्हे पाकर भी तुम्हारे साथ नही मिल सकूगा । पाणिग्रहण ! और इन हाथो से ? किन्तु जरूरत ही क्या है इन सारी बातो की । समस्त काले धब्बे यम कन्या के काले पानी मे धुल जायेगे, उसी तट पर जाकर बैठ भी गया हूँ । आज हसते-हँसते हल्की-फुल्की बाते हो । उस जन्म-दिन की कहानी को आज शेष कर ही दू । क्यो एली ?'

'अन्तु नही, याद नही मुझे ।'

'हम दोनो के जीवन मे याद करने लायक वे इने-गिने हल्के दिन ही तो है । भूलने लायक तो बहुत सारे भारी-भारी दिन है, व्यथा से, आतकित अरमानो के रक्त से लथपथ ।'

'अच्छा, कहो अन्तु ।'

'जन्म दिन के भोज की बात तो हो गई । अचानक नीरद

की इच्छा 'पलासी युद्ध' की आवृत्ति करने की हुई। खडा होकर गिरीश की तरफ हाथ-नचाकर पाठ करने लगा--

'कहाँ जा रहे, फिरकर देखो अस्ताचल गामी दिनकर,
एक वार फिरकर देखो, वस, एकवार आलोक प्रखर।'

नीरद अत्यन्त सीधा-सादा भला आदमी है, किन्तु उसकी स्मरणशक्ति निदय है। सभा विसर्जित कर देने की जैसे ही इच्छा हुई कि उन लोगो ने भवेश से गीत गाने का अनुरोध किया। भवेश ने कहा कि हारमोनियम के अभाव मे मैं 'आँ' तक नही कर सकता। तुम्हारे घर मे वह पाप नही था, फँद कटा। आशान्वित मन से उपसहार को आसन्न देखने लगा कि इसी समय अन्तु ने तर्क छेडा कि मनुष्य पैदा होता है। जन्म-दिन को या जन्म तिथि को ? कितना अनुरोध किया रुकने के लिए। वह किसी प्रकार रुकता ही नही था।

'तर्क के बीच ही देश-प्रेम का झाड़ बज उठा, गले की आवाज चढने लगी, अब क्या था, मित्र-द्राह की सम्भावना हुई। तुम्हारे ऊपर भीषण क्रोध हुआ। मेरे जन्म-दिन के सामान्य उपलक्ष की आड मे तुम्हारा महत्तर लक्ष्य था सहकर्मियो का एकत्र करना।'

'कौन लक्ष्य था, कौन उपलक्ष, उसे बाहर से समझने की कोशिश मत करो अन्तु। मैं सजा के लायक हूँ किन्तु अन्याय के लायक कदापि नही। क्या याद नही कि उसी जन्म-दिन को अतीन्द्र बाबू को मेरे मुख से नाम मिला अन्तु। वह तो एकबारगी तुच्छ वस्तु नही। तुम्हारे अन्तु नाम का इतिहास जरा सुनूँ।'

'सखि, तब सुनो। उस समय मेरी उम्र चार-पाँच के लगभग होगी, दिमाग से भी छोटा था, वाणी मे शब्दो का अभाव था। सुना है, मूर्खो की तरह केवल आखो से टकटकी लगा ताकते

रहता। बडे भैया जब पश्चिम से लौटे तो उन्होंने मुझे देखा। गोद मे उठाकर बोले कि इस बालखिल्य का नाम अतीन्द्र किसने रखा। यह तो अतिशयोक्ति अलकार है, इसका नाम रखो अनतीन्द्र। वही अनति शब्द स्नेह भरे गले मे अन्तु बनकर ढल गया। तुम्हारे निकट भी अति एक दिन अनति बन गया, जान-बूझ-कर मैंने मान गवाया।'

सहसा अतीन अचकचा कर उठा और फिर रुक गया। बोला, 'किसी के पैरो की आवाज सुनाई पडती है।'

'एला ने कहा, 'अखिल।'

'आवाज आई, दीदी।'

छत का दरवाजा खोलकर एला ने पूछा, 'क्या है ?'

'अखिल ने कहा, 'भोजन।'

घर पर इन दिनो खाना नही बनता था, निकट के रेस्तरा से जरूरत के अनुसार आ जाता था।

एला ने कहा, 'अन्तु चलो भोजन कर लें।'

'खाने-खिलाने की बात मत कहो। मनुष्य को बिना खाये मरने मे बहुत समय लगता है। ऐसी बात नही होती तो भारत-वर्ष की इतनी विशाल जनसख्या जीवित नही रहती। भाई अखिल, नाराज मत हो। मेरा हिस्सा तुम्ही खा लो। उसके बाद 'पलायनेन समापयेत' जितनी तेजी से भाग सको भाग जाओ।'

अखिल चला गया।

दोनो छत की मेज पर बैठे। अतीन ने फिर से शुरू किया, 'उस दिन जन्मोत्सव का कार्यक्रम चलने लगा। कोई हटने का नाम नही लेता था। मैं बार-बार घडी देखता था, यह रोकने

का इशारा मात्र था। अन्त मे तुमने ही कहा, 'तुम्हे जल्दी ही सो जाना चाहिये, अभी तो हाल ही मे इन्फ्लुएन्जा से उठी हो, प्रश्न हुआ, 'कितने बजे है। उत्तर दिया, 'साढे दस।' सभा-विसर्जन की सामान्य उत्सुकता देखी गई। बटु ने कहा, 'अतीन-बाबू आप बैठे जो रह गये। चलिये एक साथ चले।' 'कहा।' 'मिस्त्रो की बस्तो मे। सहसा ही उनके अड्डे पहुँचकर शराब पीना रोकें।' सारा शरीर जल उठा। 'शराब तो बन्द करोगे, बदले मे उन्हे दोगे क्या !' छोटी-सी बात को लेकर इस प्रकार उत्तेजित होने की जरूरत नही थी। नतीजा हुआ कि जो जारहे थे, वे रुक कर खडे हो गये। शुरू हुआ 'आप तब कहना क्या चाहते है ?' तीव्र स्वर मे बोल पडा, कुछ भी नही कहना चाहता।' गले की आवाज भारी कर तुम्हारी ओर अधखुली आखो से देखते हुए कहा, 'तब चलू।' तुम्हारे दो तल्ले के कमरे के पास पहुँचने पर पैर जैसे आगे बढ ही नही रहे थे। उपाय सूझ गया। ऊपर को जेब को टटोल कर कहा, 'शायद फाउन्टेन-पेन को ऊपर ही छोड आया हूँ।' बटु ने कहा, 'मैं ही खोज कर ला देता हूँ।' कह कर जल्दी-जल्दी छत पर चढ गया। पीछे-पीछे मैं भी दौड आया। कुछ देर खोजने का अभिनय कर बटु ने मुस्कुराते हुए कहा, 'देखिये तो, मेरा अनुमान है, आपकी जेब मे ही है।' निश्चित रूप मे जानता था कि मेरे फाउन्टेनपेन की जगह निर्धारित करने के लिए भूगोल-अनुसन्धान का उचित क्षेत्र मेरा डेरा ही था। स्पष्ट कहना पडा, 'एलादि के साथ कुछ विशेष बाते हैं।' बटु ने कहा, 'ठीक ही तो है, मैं प्रतीक्षा करता हूँ।' मैं बोला, 'प्रतीक्षा नही करनी पडेगी, तुम जाओ।' बटु

ने मुस्कुराते हुए कहा, 'अतीनबाबू, आप क्रोध क्यो करते हैं, मैं चला।'

पुन पैरो की आहट सुनकर अतीन चौंक पडा। अखिल छत पर आया। बोला, 'एक अजनबी ने अतीनबाबू को यह कागज का टुकडा दिया है। मैं उसे रास्ते पर खडा छोड आया हूँ।'

एला का कलेजा धक-धक करने लगा। बोली, 'कौन आया ?'

अतीन ने कहा, 'बाबू को भीतर आने दो।'

अखिल ने जोर से कहा, नही आने दूँगा।'

अतीन ने कहा, 'डरने की बात नही, बाबू को तुम पहचानते हो। उन्हे अनेक बार देखा है।'

'नही, मैं नही पहचानता।'

'खूब पहचानते हो। मैं कहता हूँ, डरने की बात नही। मैं जो हूँ।'

एला ने कहा, 'अखिल तुम जाओ, बेकार डरो मत।'

अखिल चला गया।

एला ने कहा, 'क्या बटु आया है ?'

'नही, बटु नही है।'

'बताओ न कौन आया है। मुझे कैसा लग रहा है।'

'छोडो इन बातो को, जो कह रहा था, कहने दो—।'

'अन्तु, किसी तरह मन नही लगा पाती।'

'एला, मुझे अपनी कहानी शेष करने दो। अधिक देर नही। तुम छत पर उठ आई। रजनीगंधा की मृदुल गंध ने मत्त बना दिया। फूल के गुच्छे को सबकी आंखो से छिपा कर मेरे हाथों मे देने के लिए रखा था। हम लोगो के सम्बन्ध मे आंतरिक जीवन लीला उन्ही सुकुमार फूलो की गोपन अभ्यर्थना से प्रारम्भ

हुई, उसके बाद से अतीन्द्रनाथ की विद्या-बुद्धि, गम्भीरता क्रमश आत्म-विस्मृति के अतल गर्भ मे विलीन होती चली गई। उसी दिन पहली वार तुमने मेरे गले से लिपट कर कहा, 'यह लो जन्म-दिन का उपहार।' वही प्रथम चुम्बन मुझे मिला। आज अन्तिम चुम्बन का दावा पेश करने आया हूँ।'

अखिल ने कहा, 'बाबू ने दरवाजे पर धक्का मारना शुरू किया है। शायद टूट गया। कहते है, जरूरी बाते है।'

'कोई डर नही अखिल, दरवाजा टूटने के पहिले ही उन्हे ठण्डा कर दूगा। बाबू को वही अनाथ की तरह छोडकर तुम अभी किसी दूसरी जगह भाग जाओ। मैं एला दीदी की रखवाली के लिये हूँ।'

एला अखिल को गोद मे खीचकर उसके सिर को चूमती हुई बोली, 'मेरे सोना, मेरे भाई तुम चले जाओ। तुम्हारे लिये मेरे आँचल मे कुछ नोट बँधे ह, तुम्हारी एला दीदी की ओर से आशीर्वाद है। मेरे पैरो को छूकर कहा, अभी तुरन्त चले जाओगे न, देरी तो नही करोगे।'

अतीत ने कहा, 'अखिल, तुम्हे मेरा एक परामश सुनना ही होगा। तुमसे यदि कभी कोई किसी प्रकार का प्रश्न पूछे तो सच्ची वाते ही बताना। कहना, ग्यारह बजे रात को मैंने ही तुम्हे इस घर से जवदस्ती वाहर कर दिया है। चलो, वात की सच्चाई पूरी करलू।'

एला ने पुन अखिल को अपनी ओर खीचकर कहा, 'मेरी चिन्ता मत करना भाई, तुम्हार अन्तु दादा ह, कोई डर नही।'

अखिल को जव अन्तु ढकेलते हुए ले चला तो एला ने कहा, 'मैं भी तुम्हारे साथ आऊँ अन्तु ?'

आदेश के स्वर मे अन्तु ने कहा, 'नही ? किसी तरह भी नही ।'

छत की चहारदीवारी से छाती सटाकर एला खडी रही। रुलाई गले तक आ-आ कर लौटने लगी, मालूम पडा, 'आज रात को अखिल उसके पास से सदा के लिए चला गया ।'

अतीन लौट आया । एला ने पूछा, 'क्या हुआ अन्तु ?'

अतीन ने कहा, 'अखिल चला गया । भीतर से मैंने दरवाजा वन्द कर दिया है।'

'और वह आदमी !'

'उसको भी छोड आया हूँ । वह बैठे-बैठे सोच रहा था कि मैं काम से जी चुराकर केवल बाते ही कर रहा हूँ । जैसे कोई नवीन अरबो उपन्याम की रचना प्रारम्भ हुई हो । अरबी उपन्यास ही तो है, सबकुछ आखिर कपाल कल्पना ही तो है ! डर लग रहा है एला ! क्या मुझसे नहीं डरती हो ?'

'तुमसे डर ! बोलते क्या हो ?'

'मैं क्या नही कर सकता ! पतन की अन्तिम सीमा तक जा पहुँचा हूँ । उस दिन हम लोगा के दल ने एक अनाथ विधवा को लूट लिया है । मन्मथ बूढी से परिचित था—खबर देकर रास्ता दिखाकर वही दल को वहाँ तक ले गया । छद्म-वेष मे रहने के वावजूद भी बुढिया ने उसे पहचान लिया, बोली, 'मनु, तुमने ऐसा काम किया ।' उसके वाद बुढिया के पास कुछ भी नही बचा । जिसे देश का प्रयोजन कहते हैं, उसी आत्म-धर्म के प्रयोजन मे रुपये इन्ही हाथो से यथास्थान पहुँचते हैं । मैंने उन्ही रुपया से अपना उपवास तोडा है । इतने दिनो के वाद वास्तविक चोरी के कलक से कलकित हुआ हूँ । चोर अतीन्द्र के नाम को

वटु ने फँसा दिया है। पीछे प्रमाण के अभाव मे म दण्ड मे वचित न हो जाऊँ, अथवा थोडा-सा दण्ड पाऊँ, इसीलिए पुलिस सुपरिटेन्डेन्ट के द्वारा मुकद्मे को अँगरेज मजिस्ट्रेट की अदालत मे दायर न कर उसने जयन्त हजरा की इजलास मे दायर करने की मन्त्रणा की ह। वह अच्छी तरह से जानता है कि कल जरूर पकडा जाऊँगा। इस बीच मुझसे डरो, मैं अपनी मरी हुई आत्मा के काले भूत से स्वय डरता हूँ। आज तुम्हारे घर पर कोई नही है।

'क्यो, तुम जो हो।'

'मेरे हाथ से तुम्हे कौन बचायेगा ?'

'नही बचूँगी सही।'

तुम्हारी अपनी ही मडली मे एक दिन जितने लोग थे, सब-के-सब भाई थे जिनके ललाट पर तुमने हर साल तिलक लगाया है, उन्ही के भीतर से गुञ्जन उठा है कि तुम्हारा बचा रहना उचित नही है।'

'उन लोगो से बढकर अपराध मैंने कौन-सा किया है ?'

'अनेक बाते जानती हो। बहुतो के नाम जानती हो, तङ्ग करने से भेद खोल दोगी।'

'कभी भी नहीं।'

'किस प्रकार कहूँ, जो आदमी आज आया था, कहीं यही आदेश लेकर तो नही आया था ? आदेश मे कितनी ताकत है, इसे तो तुम जानती हो।'

एला ने चकित होकर कहा, 'अन्तु, क्या तुम ठीक कह रहे हो।'

'हम लोगो को सिर्फ एक खबर लगी है।'

'कौन-सी खबर ?'

'आज रात्रि के अन्तिम पहर मे पुलिस तुम्हें पकडने आयेगी ।'

'निश्चित रूप से जानती थी कि एक-न-एक दिन पुलिस मुझे पकडने आयेगी ।'

'तुम्हे कैसे मालूम हुआ ?'

'कल बटु की चिट्ठी मिली है । उसने खबर दी है कि मुझे पुलिस पकडेगी । लिखा है, वह अभी भी मुझे बचा सकता है ।'

'किस उपाय से ?'

'लिखा है, यदि मैं उससे विवाह कर लू तो वह मेरा जामिन बनकर मेरा दायित्व ले सकता है ।'

अतीन का मुख काला पड गया । उसने पूछा, 'क्या तुमने उसका जवाब दे दिया ?'

एला ने कहा, 'मैंने उसी पत्र पर लिख दिया है, 'पिशाच ।' और कुछ नहीं ।'

'खबर मिली है कि पुलिस के साथ बटु ही आयेगा । तुम्हारी सम्मति पाते ही बाघ से बचाकर मगर की माद मे आश्रय दिलाने की तैयारी मे लग जायेगा । उसका हृदय कोमल है ।'

एला ने अतीन के पैरो को पकडकर कहा, 'अन्तु मुझ अपने हाथा मार डालो । इससे बढकर मेरा सौभाग्य और हा ही क्या सकता है ।' मेज से उठ कर खडी हो एला ने अतीन का वार-वार चुम्बन लिया ओर बोली, 'मारो, अब मुझे मार डालो ।' छाती के सामने का वस्त्र फट गया ।

अतीन पत्थर की मूरत की तरह कठोर बनकर खडा रहा ।

एला ने कहा, 'अन्तु, जरा भी मत सोचो । मैं जो तुम्हारी
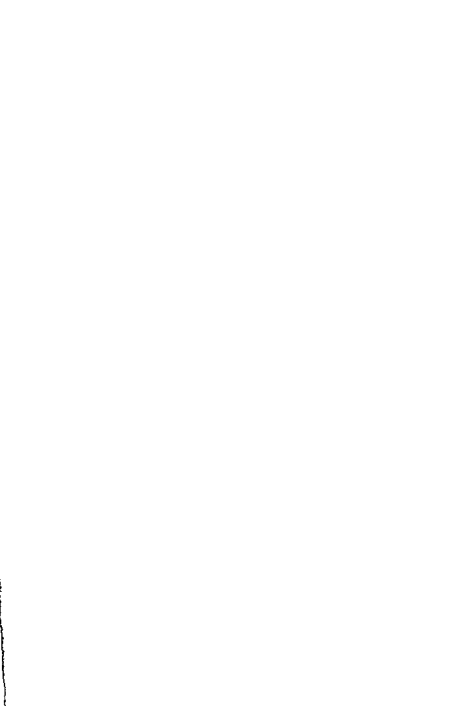
उपसंहार

ज्योंही बाहर सीटी की आवाज हुई, अतीन के हाथ मे लगी पिस्तौल ने एक गरज के साथ आग उगल दी। एला निश्चेष्ट होकर उसके पाँवो मे आ गिरी।

फिर अतीन ने किसी के चलने की आवाज सुनी। उसने मुड़कर देखा तो सामने पिस्तौल ताने हुए वटु खडा था। अतीन ने उस ओर अपनी पिस्तौल का लक्ष्य किया ही था कि वटु ने अतीन को अपनी पिस्तौल का निशाना बना लिया। अतीन निष्प्राण हो एला के शरीर पर लुढक गया।

सीटी का स्वर पुन तेजी से हुआ।

वटु ने चाहा कि वहाँ से निकल भागे। किन्तु दो-चार कदम रखते ही वह लडखडाता हुआ गिर गया। सिर उठाकर देखा, कुछ दूरी पर पिस्तौल लिये यम सदृश इन्द्रनाथ खडे हुए है। पुलिस ने उनको चारो ओर से घेर लिया है। इन्द्रनाथ की वह स्थिति समर-भूमि मे थके हुये राजा की भाति थी फिर भी उनका मस्तक ऊंचा उठा हुआ था। हार होने पर भी वे गौरवान्वित थ। वटु ने अपने हाथ उठाकर अपने नेता से विदा ली और निश्चेष्ट हो रहा।

* * * *

बादशाह की पुत्रियाँ

औरगजेब से पराजित होकर शाहशुजा अपनी तीन युवा पुत्रियो के साथ आराकान के राजा की शरण मे गया। आराकान के राजा ने शाहशुजा की सुदर पुत्रियो को देखकर सोचा कि क्यो न इनसे अपने पुत्रो का विवाह कर दिया जाये ? जब यह प्रस्ताव शाहशुजा के सामने रक्खा गया तो उन्होने उसे अस्वीकार कर दिया, इसलिये एक दिन शुजा को नौका-विहार के बहाने, नदी मे धोखे से उनकी नौका डुबा देने का प्रयत्न किया गया, तब शुजा ने कोई उपाय न देखकर अपनी छोटी पुत्री अमीना को जल मे फेक दिया और बडी पुत्री ने आत्म-हत्या कर ली। शाहशुजा का एक विश्वस्त अनुचर रहमतअली जुलेखा को लेकर तैरता हुआ भाग गया। शाहशुजा की लडते-लडते मृत्यु हो गई।

सयोग से अमीना नदी मे बहती हुई एक धीवर के जाल मे फस गई। धीवर उसे लेकर अपनी झोपडी मे आया तथा उसको बडे स्नेह एव यत्न से पालन करने लगा। अमीना उसी धीवर के घर मे रहकर बडी हुई।

इसी बीच आराकान के वृद्ध नरेश स्वर्गवासी हो गए और युवराज सिंहासनारूढ हुए।

२

एक दिन प्रात वृद्ध धीवर ने पुकारा—'तिन्नी ! अरी कहा गई ?' धीवर ने अराकानी भाषा मे अमीना का यह नया नाम रक्खा था।

'क्या है, बाबा ?'

'इतनी सुबह तू कहाँ गई थी ?'—वृद्ध ने किंचित भर्त्सना के भाव से कहा—'आज तूने अभी तक काम-काज मे हाथ नही लगाया। मेरे नए जाल मे गोंद भी नही लगाया, और मेरी नाव ?'

अमीना यह सुनकर, धीवर के पास आकर प्यार से बोली—'बाबा ! आज मेरी छुट्टी है, क्योंकि आज मेरी बहन आई है।'

'कहा से आई है तेरी बहन ?'

'मैं हूँ,'—एक ओर से निकलती हुई जुलेखा ने कहा।

वृद्ध चकित रह गया। उसने जुलेखा के बिलकुल पास जाकर उसका मुँह देखा, फिर बोला—'तू कुछ काम-काज जानती है ?'

अमीना ने कहा—'बाबा ! दीदी कुछ काम नही करेंगी। मैं स्वय इनका काम कर दिया करूँगी।'

तभी वृद्ध ने जुलेखा से पूछा—'अरी तू रहेगी कहाँ ?'

जुलेखा बोली—'अमीना के पास, और कहाँ !'

वृद्ध मन मे सोचने लगा—'यह अच्छी आफत है।' फिर बोला—'और खाओगी कहा से ?'

'इसका भी जरिया है'—यह कहते हुए जुलेखा ने बडी लापरवाही के साथ उसके सामने एक अशरफी फेंक दी।

अमीना उस अशरफी को उठाकर, धीवर से बोली—'तुम अब कुछ मत बोलना, चुपचाप चले जाओ, बाबा ! काम मे बहुत देर हो रही है।'

जुलेखा भेष बदले हुए अनेको स्थानो मे भ्रमण करती हुई अमीना के पास किस प्रकार आ पहुँची, यह एक लम्बी कथा है।

उसका रक्षक रहमतशेख एक फर्जी नाम रखकर आराकान के राज-दरबार मे काम कर रहा था ।

३

पतली नदी चुपचाप वह रही थी । ग्रीष्मकाल की प्रातःकालीन वायु मे केल वृक्ष की लाल वर्णवाली पुष्पमजरी से पुष्प पृथ्वी पर झर रहे थे । उस वृक्ष के नीचे बैठी हुई जुलेखा अमीना से इस प्रकार कह रही थी—'खुदा ने हम लोगो को इसलिए जिन्दा रखा ह कि हम अपने वालिद के खून का वदला ले सके ।'

तभी अमीना ने नदी के दूसरे छोर की ओर छायामय वन-श्रेणी को देखते हुए कहा—'दीदी ! मुझे अव यह बातें नही सुहाती । यह दुनिया अब मुझे एक प्रकार से अच्छी लग उठी है। जो लोग हमेशा मारकाट मचाये रहते है, वे यदि मरना चाहें तो भले ही मरें, परन्तु मुझे अब किसी प्रकार के दु ख का अनुभव नही हो रहा है ।'

जुलेखा ने कहा—'बहन ! बडे अफसोस की बात है, जो तुम शाही खानदान की लडकी होते हुए भी ऐसी बातें कह रही हो ? कहाँ हमारा दिल्ली का बादशाही महल और कहा यह धीवर की छोटी-सी झोपडी ?'

अमीना ने हँसते हुए कहा—'यदि किसी लडकी को दिल्ली के शाहीमहल के बजाय यह छोटी-सी झोपडी और केलू के वृक्ष अच्छे लगते हैं, तो इसके लिए दिल्ली के शाही महल की आखो से आसू की एक बूँद भी नही गिरेगी ।'

जुलेखा ने अनमने भाव से उत्तर दिया—'इसके लिए मैं तुझे कोई दोष नही देती, क्योंकि उस समय तू बहुत छोटी थी, लेकिन

तुझे यह जान लेना चाहिये कि वालिद सबसे ज्यादा तुझी को प्यारे थे। इसीलिये उन्होने तुझे अपने हाथो से पानी मे फेका था। वालिद की दी हुई उस मौत से तू जिन्दगी को ज्यादा अच्छा न समझ। अगर तू उनके खून का बदला ले सके तो अपनी जिन्दगी को सफल समझना।'

अमीना चुपचाप बैठी रही। यह साफ जाहिर हो रहा था कि इस अप्रिय प्रसङ्ग के बाद भी बाहर की वह मस्त हवा केलू के गाछ और उसका अपना मदिर यौवन, किसी की मधुर-स्मृति मे उसे आकण्ठ निमग्न किए हुए थे। कुछ देर बाद उसने कहा, 'दीदी! तुम जरा यही बैठो। कुछ काम बाकी रह गया है, मैं उसे करके अभी आती हूँ। खाना भी पकाना ही है, अगर नही पकाऊँगी तो सब गडबड हो जायगा।'

४

जुलेखा नदी के किनारे चुपचाप बैठी हुई अमीना के बारे मे बहुत-सी बातें सोच रही थी। उसी समय किसी ने अचानक पीछे से आकर उसकी दोनो आँखें बन्द करली। जुलेखा ने घबरा कर अचकचाते हुए कहा—'कौन है?'

उसका स्वर सुनते ही आगन्तुक युवक ने अपने हाथ पीछे हटा लिए। फिर जुलेखा की ओर देखते हुए बोला—'तू तिन्नी तो नही है?' मानो जुलेखा अब तक अपने को तिन्नी बता रही हो और उस युवक ने अपनी तीक्ष्ण दृष्टि द्वारा उसका वास्तविक परिचय प्राप्त कर लिया हो।

तभी जुलेखा ने अपने कपडो को सम्हालते हुए कठोर स्वर मे कहा—'कौन है तू?'

युवक बोला—'तुम मुझे नही पहिचान पाओगी। तिन्नी कहाँ चली गई ?'

बातचीत के शोर का सुनकर तिन्नी बाहर निकल आई। उसने जब जुलेखा को क्रुद्ध और युवक को अचकचाया हुआ देखा तो वह खिलखिलाकर हँस पडी। फिर जुलखा की ओर देखती हुई हास्यपूण मुद्रा मे बोली—'दीदी! तुम इसकी बातो का बुरा मत मानना। यह आदमी तो निरा जङ्गली जानवर है। अगर इसने कोई शैतानी की हो तो बताओ, मैं इसे अभी ठीक कर दूगी।' फिर युवक की ओर देखते हुए बोली—'दालिया! तुमने क्या किया है ?'

युवक बोला—'मैंने भूल से इन्हे तिन्नी समझ लिया और आखे मूद दी थी।'

यह सुनकर तिन्नी ने क्रोध प्रकट करते हुए कहा—'फिर छोट मुँह बडी बात करते हो ?' तुमने तिन्नी की आँखे कब बन्द की थी ? बडे शैतान हो गये हो ?'

युवक बोला—'आखें बन्द करने के लिए बहुत सहसा की आवश्यकता नही होती, यदि पहले से कुछ अभ्यास रहा हो। लेकिन तिन्नो! सच कह रहा हूँ, आज तो मैं सचमुच ही डर गया।' इतना कह कर वह नजर बताते हुए जुलेखा की ओर देखकर, जरा-सा हँस दिया।

अमीना ने कहा—'तुम पूरे बहसी हो। शाहजादी के सामने खडे होने के काबिल बिलकुल नही हो। तुम्हे तमीज सिखलाना जरूरी है। देखो, इस तरह सलाम करना चाहिये।' यह कहते हुए अमीना ने मीठी भाव-भगिमा से कमर को कुछ टेढी करते हुए जुलेखा को सलाम किया।

युवक ने बडी कठिनाई से उसका थोडा अनुकरण किया ।

'अब इस तरह तीन कदम पीछे चलो ।' अमीना बोली ।

युवक पीछे की ओर हटा ।

'फिर से सलाम करो ।'

युवक ने दुबारा सलाम किया । इस तरह सलाम करते-करते युवक झोपडी के दरवाजे तक पहुँचा ।

अमीना ने चिल्ला कर कहा—'अरे अरे घर के अन्दर चले जाओ ।'

युवक यह सुनते ही घर के भीतर चला गया । तब अमीना ने बाहर से कुण्डी लगा दी । फिर उसे सुनाती हुई बोली—'थोडा-बहुत काम ही कर लो, आग जला दो ।'

तदुपरान्त वह जुलेखा के पास आकर बैठ गई और बोली—'दीदी नाराज मत होना, यहा लोग होते ही इसी तरह के है । मैं तो इन लोगो से तङ्ग आ गई हूँ ।'

परन्तु अमीना के मुँह अथवा व्यवहार से उसके कहे हुए विचारो का समर्थन बिल्कुल नही हो रहा था । अनेक विषयो मे यहा के लोगो के प्रति उसका पक्षपात ही अधिक देखा जाता था ।

उसी समय जुलेखा ने कुछ क्रोध प्रकट करते हुए कहा—'अमीना, तेरे व्यवहार से मुझे सचमुच अचरज हो रहा है । एक मामूली आदमी की यह हिम्मत कि वह आकर इस तरह आँखे बन्द कर ले ?'

अमीना ने भी अपनी दीदी के स्वर मे स्वर मिलाते हुए कहा—'ठीक कह रही हो, दीदी ! अगर इसकी जगह किसी

नवाब या बादशाह का लडका भी होता, तो भी मैं उसे बेइज्जत करके भगा देती।'

जुलेखा की हँसी अब और अधिक नही रुक सकी। उसने मुस्कराते हुए कहा—'अमीना! सच बताना, तुझे जो यहा की जिन्दगी अच्छी लग रही है, सो क्या इस जङ्गली नौजवान की वजह से ही है?'

अमीना ने उत्तर दिया—'दालिया मेरा बहुत काम करता रहता है। कभी फल-फूल ला देता है तो कभी शिकार कर लाता है। कोई भी काम क्यो न कहूँ, उसे पूरा करने मे देर नही लगती। मैं अगर फटकारती हूँ तो बुरा नही मानता और अगर कभी यह कहती हूँ कि दालिया! मैं तुझ से बहुत नाराज हूँ तो उस समय वह मेरे मुह की ओर देखकर हँस जाता है। देश मे हँसी का तरीका ही यह है कि यहाँ के लोग पीठ पर मुक्के पडने पर खुश होते ह। मैं इस बात की आजमायश कर चुकी हूँ। तुम्ही देखो, मैंने उसे घर मे बन्द कर दिया है और वह भीतर बैठा हुआ मजे मे चूल्हा फूक रहा है। मैं सचमुच इससे तङ्ग आ गई हूँ, लेकिन क्या करूँ, कुछ समझ नही पडती?'

जुलेखा ने कहा—'अच्छा, मैं इसे ठीक करने की कोशिश करूँगी।'

अमीना हँस कर बोली—'दीदी! मैं तुम्हारे पाव पडती हूँ, तुम उससे कुछ मत कहना।' अमीना ने यह बात ऐसे ढङ्ग से कही, मानो वह युवक उसका कोई पालतू जानवर हो, जो किसी मनुष्य को देखकर अपने वन्य-स्वभाव के कारण वहाँ से जान बचाकर भाग निकलने की कोशिश मे लग जाता हो।

उसी समय धीवर ने वहाँ आकर कहा—'तिन्नी! आज दालिया नही आया क्या?'

'आया है।' तिन्नी ने उत्तर दिया।

'कहाँ है ?'

'वहुत ऊधम मचा रहा था, इसीलिए मैंने उसे बन्द कर दिया है।'

यह सुन कर वृद्ध ने कुछ चिन्तित-सा होते हुए कहा—वेटी ! छोटी उम्र मे सब ऐसे ही होते है। तुम उसे कष्ट मत दिया करो। दालिया कल एक अशरफी देकर तीन मछली ले गया था।'

अमीना ने कहा—'तुम चिन्ता मत करो।' वावा ! मैं आज उससे दो अशरफिया ले लूगी और एक भी मछली नही दूँगी।'

अपनी पालित कन्या को थोडी ही उमर मे इतनी होशियार देखकर वृद्ध को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। फिर वह स्नेहपूर्वक उसके मस्तक पर हाथ फेरता हुआ वहा से चला गया।

५

दालिया के आने जाने मे अव जुलेखा को भी कोई आपत्ति नही रही। हालाकि यह एक आश्चय की वात है, परन्तु विचार करने पर इसमे कोई आश्चय नही होगा। जिस प्रकार नदी के एक ओर स्त्रोत है, उसी प्रकार दूसरी ओर तट भी हैं। नारी के हृदय मे भी आवेश और लोकलाज होती है। परन्तु आराकन के इस निजन प्रदेश मे समाज कहा ? यहा तो केवल निश्चित ऋतु मे ही वृक्ष की शाखाएँ फूटती हैं। सामने की नीले रङ्ग-वाली नदी वर्षा मे उज्जवल, शरद् मे स्वच्छ तथा ग्रीष्म मे क्षीण होती है। यहा पर पक्षियो के मीठे स्वर मे आलोचना विलकुल नही रहती। कभी-कभी दक्षिण मे प्रवाहित होने वाली वायु, समीप के गाँव से मनुष्यो के कण्ठ से निकले हुए स्वरो की

ध्वनियाँ अवश्य ले आती है, परन्तु कानाफूँसी नही। जिस प्रकार अट्टालिकाओ पर क्रमश धीरे-धीरे घासफूँस उगते है, वहा कुछ दिन रहने से प्रकृति के निषिद्ध आघात से मनुष्य द्वारा निर्मित लौकिकता की सुदृढ दीवार विना किसी लक्ष्य के टूट जाती है। फिर प्रकृति के साथ मिल कर सब एक हो जाता है। दो समान आयु के पुरुष और नारी का मिलन दृश्य नारी का जितना अच्छा लगता है, वैसा और कुछ नही लगता। उसके लिए इतने रहस्य, इतने आराम तथा इतने कौतूहल का विषय और नही हो सकता। अत उस झोपडी के भीतर दरिद्रता की छाया मे जुलेखा के कुल-गर्व तथा लोक-मर्यादा का भाव जब अपने आप कमजोर हो गया, तब पुष्पो से आच्छादित केलू वृक्ष के नीचे अमीना और दालिया का मिलन-दृश्य उसे बहुत ही अच्छा लगने लगा। जिसका कोमल हृदय भी एक अतृप्त आकाक्षा से भर उठता और उसे चचल कर देता। अन्त मे ऐसा हुआ कि यदि कभी युवक के आने मे विलम्ब हो जाता तो अमीना जैसी उत्कण्ठा से उसकी प्रतीक्षा करती, वैसी ही जुलेखा भी बडी बेचैनी से उसकी राह देखती और जब दोनो एक हो जाते तो जिस प्रकार कलाकार अपने नए बनाए चित्र को थोडी दूर से देखता है, उसी प्रकार वह भी स्नेहपूर्वक उन्हे देखती। कभी-कभी बनावटीपन से मौखिक कलह तथा भर्त्सना करती और कभी अमीना को घर मे बन्द करके युवक के मिलन—आवेश का मजा लेती।

सम्राट एव अरण्य मे एक समानता है। दोनो ही स्वाधीन और स्वतन्त्र होते है। दोनो को ही किसी के नियमो से बाध्य नही होना पडता। दोनो मे प्रकृति की एक स्वाभाविक सरलता

है। जो बीच के हैं, जो दिन-रात लोकशास्त्र के अक्षरो को मिलाकर अपना जीवन-यापन करते हैं, वे ही बडो के पास सेवक, छोटो के पास स्वामी बने हुए उलझन मे फँस कर आश्चर्यचकित हो जाते है। जङ्गली दालिया प्रकृति देवी का एक चचल वालक था। और शाहजादी के पास किसी प्रकार के सकोच का अनुभव नही करता। और शाहजादियाँ भी उससे समानता का व्यवहार करती थी। उनके हसमुख, सरल, कौतुकप्रिय, प्रत्येक दशा मे निडर, असकुचित चरित्र मे दरिद्रता का कोई भी चिह्न नही था। परन्तु इन सब खेला के बीच जुलेखा का हृदय कभी-कभी हाहाकार कर उठता था। वह सोचती—'एक बादशाह की पुत्री की यह कैसी बरबादी है ?'

एक दिन प्रात जुलेखा ने दालिया के आते ही उसका हाथ पकडकर पूछा—'दालिया ! क्या हमे तुम यहाँ के राजा को दिखा सकते हो ?'

'हा, दिखा सकता हूँ, परन्तु किसलिए ?'

'मेरे पास एक कटार है। मैं उसको उसके सीने मे भोकना चाहती हूँ।'

दालिया को यह सुनकर पहले तो आश्चर्य हुआ, परन्तु जुलेखा के उत्तेजित मुख को देखकर उसके चेहरे पर हँसी फूट पडी। मानो उसने ऐसी मनोरजक बात कभी भी नही सुनी हो। राजपुत्री के अनुरूप तो यही परिहास है अचानक जाकर चलते-फिरते राजा के सीने मे कटार भोक देने से, राजा कैसा अचम्भे मे रह जायेगा, यही चित्र उसके हृदय मे उदय होकर उसकी शान्त हँसी को रह-रहकर उच्च हास मे परिवर्तित कर रहा था।

६

रहमतशेख ने उसके दूसरे दिन ही जुलेखा को एक पत्र भेजा, जिसमें लिखा था कि आराकान का नया राजा, धीवर की झोपडी मे दोनो बहनों को छिपकर देख चुका है, तथा अमीना को देखकर उस पर आसक्त हो गया है। उसकी इच्छा अमीना को राजमहल मे लाकर उसके साथ विवाह करने की है। बदला लेने का ऐसा सुन्दर अवसर फिर कभी नही आएगा।

अमीना ने देखा—दालिया वहा मौजूद था तथा वह कौतूहल के साथ हँस रहा था। उसकी हँसी देखकर उसके हृदय को आघात पहुँचा। वह बोली—'दालिया ! तुम जानते हो, मैं महारानी होने जा रही हूँ।'

दालिया ने उत्तर दिया—'पर अधिक समय के लिए नही।'

अमीना ने दालिया का यह उत्तर सुनकर पीडित एव विस्मित हृदय से सोचा—'सचमुच यह जङ्गली हिरन है। इसके साथ मनुष्यो का सा व्यवहार करना मेरा पागलपन था।' उसने दालिया को और भी सचेत करने के लिए कहा—'क्या मैं राजा का वध करके, लौटकर आ सकूगी ?'

स्थिति की गम्भीरता समझ कर दालिया ने कहा—'लौटना तो मुश्किल ही है।'

अमीना का हृदय सूख गया। वह जुलेखा की ओर मुंह करके बोली—'दीदी ! मैं तैयार हूँ।' इसके पश्चात् वह दालिया की ओर देखती हुई दुखी हृदय से परिहास का ढोंग करते हुए बोली—'मैं महारानी बनकर सवप्रथम तुम्ही को राजद्रोह के अपराध मे दण्ड दूगी।'

दालिया यह सुनकर हँस पडा।

७

घुडसवार, पैदल, ध्वजा, हाथी, बाजे, प्रकाश। धीवर की झोपडी मानो नष्ट हो जायेगी। राजमहल से दो स्वण-मण्डित सेविकाएँ आई हैं।

अमीना ने जुलेखा के हाथ से कटार ले ली। वह उसकी हाथी दाँत से बनी हुई कला को बहुत देर तक देखती रही। इसके पश्चात् वस्त्र उठाकर अपने सामने ही एक बार उसकी धार की परीक्षा भी कर ली। फिर एक बार कटार को स्पर्श करके, उसे म्यान मे रख कर, वस्त्रों मे छिपा लिया।

उसकी एकमात्र इच्छा थी कि वह इस मृत्यु यात्रा के पहले एक बार दालिया से और मिल ले, परन्तु उसका कल मे ही कोई पता न था। पालकी मे चढने से पहले अमीना के अश्रुपूरित नेत्रो से आखिरी बार अपने बचपन के आश्रय को देखा। झोपडी, नदी, केलू के वृक्ष। फिर वह धीवर का हाथ पकड कर रुधे हुए कण्ठ से बोली—'बाबा! तुम्हारी तिन्नी जा रही है, अब तुम्हारे घर की देख-भाल कौन करेगा?'

धीवर बच्ची की तरह रो पडा।

अमीना ने कहा—'यदि दालिया आए तो उसको यह अगूठी देते हुए कहना कि तिन्नी जाते समय दे गई थी।' फिर वह तेजी से पालकी मे बैठ गई।

महान उत्सव के साथ पालकी नगर की ओर चली गई। अमीना की झोपडी, नदी-तट, केलू के वृक्ष की छाया, सब अँधेरे मे निजन तथा शान्त हो गए।

दोनों पालकी नगर का मुख्यद्वार पार करके राजमहल में जा पहुँची। दोनो बहनें पालकियो से उतरीं। अमीना के भाव रहित मुख पर न तो हँसी ही थी और न दुख। जुलेखा का मुख विवर्ण था। जब कर्त्तव्य दूर था, तब उसके उत्साह में तेज थी, अब काँपते हुए हृदय से, व्याकुल स्नेह से, उसने अमीना को हृदय से लगा लिया। उसने मन मे सोचा—'इस कली को नये प्रेम के वृक्ष से तोडकर मैं किस रक्त के स्रोत मे प्रवाहित करने जा रही हूँ ?'

परन्तु अब सोचने का समय नही था। दोनो बहनें शिविकाओं के सहारे सैकडो, हजारो दीपकों की ज्योति मे स्वप्न की भाति चल रही थी। अन्त पुर के द्वार पर अन्त मे अमीना बोली दीदी!

जुलेखा ने अमीना को आलिंगनपाश मे बाँधकर चूम लिया।

धीरे-धीरे दोनो ने राजमहल मे प्रवेश किया। वहा राजा राजकीय वस्त्रो मे आभूषित पलङ्ग पर बैठे थे। अमीना सकोच-वश द्वार के पास खडी थी। जुलेखा ने आगे बढकर राजा के पास जाकर देखा—राजा कौतूहल के साथ हँस रहा है। जुलेखा के मुख से चीख निकली—'दालिया ?'

अमीना बेहोश होकर गिर पडी।

दालिया उठकर, उसे घायल पक्षी की भाँति गोद मे उठाकर पलङ्ग पर ले गया।

अमीना ने होश मे आकर कटार निकल कर जुलेखा की ओर देखा और जुलेखा ने दालिया के मुख की ओर। दालिया मूक-हास्य के साथ दोनो को देखता रहा। कटार भी इस दृश्य को देखकर म्यान से थोडा-सा मुँह निकाल कर हँस उठी।

* * * *

बाँसुरी

बाँसुरी की ध्वनि चिर-पुरातन है ऐसा लगता है, मानो शिवजी की जटाओ से गङ्गा की धारा सुपरिचित पृथ्वी के अन्त स्तल पर सदा से बहती आ रही है। मानो अमरावती का शिशु मृत्युलोक की धूलि मे, स्वग का खेल, खेलने के लिए उतर आया हो।

पथ के किनारे खडा हुआ मैं बासुरी सुना करता हूँ। उस समय मन न जाने कैसा हो जाता है—कुछ समझ मे नही आता। अपने परिचित दु ख-सुख के साथ जब मैं उस व्यथा की तुलना करता हूँ तो उसका मिलान नही बैठता। ज्ञात होता है, वह सुपरिचित हँसी से कही अधिक उज्जवल है, सुपरिचित आसुओ से कही अधिक गम्भीर है।

ऐसा जान पडता है—परिचित सत्य नही, अपितु अपरिचित ही सत्य है। ऐसी ऊटपटांग बातें मन क्यो सोचता है—इसका उत्तर शब्दो के पास नही है।

आज प्रात उठ कर सुना—नौबत मे बाँसुरी बज रही थी, किसी के घर विवाह था।

विवाह की इस पहले दिन की स्वर-लहरी के साथ प्रतिदिन का स्वर कहाँ मिलता है! अज्ञात, अतृप्त, घोर निराशा, अनादर, अपमान, नीरव अवसाद, तुच्छ कामना की कृपणता, नीरस-कलह, क्षमाहीन क्षुद्रता का आघात तथा अभ्यस्त जीवन-यात्रा की धूलधूसरित दरिद्रता इन सब बातो का आभास बाँसुरी की देववाणी मे मिलता है!

गीत के स्वर ने सृष्टि के ऊपर से, इन परिचित बातो
आवरण को एक ही झटके मे हटा दिया ।

चिरकालिक वर-वधू की 'शुभ दृष्टि' किसी चूनरे
सलज्ज घूँघट के भीतर झाँक रही है—यह बात बाँसुरी
तान से ही स्पष्ट प्रकट हो जाती है ।

जिस समय माला-परिवर्तन का गीत वहाँ बासुरी मे ब
उसी समय मैंने वधू की ओर निहार कर यह देखा कि वह ठ
कण्ठ मे सोने का हार तथा पाव मैं कडे पहने हुए है—
प्रतीत होता था मानो वह क्रन्दन के सरोवर मे प्रफुल्लित आन
कमल के ऊपर खडी हुई हो ।

स्वर-लहरी के भीतर वह इस ससार की निवासिनी
ज्ञात होती । अब वह सुपरिचित घर की बालिका, अपरि
घर की वधू के रूप मे दिखाई देती है ।

बाँसुरी बोली—'सत्य यही है ?'

* * *

बदली का दिन

नित्य ही दिन भर काम रहता है और चारो ओर भीड-भाड रहती है। नित्य ही ऐसा लगता है—उस दिन के काम मे, उस दिन की बातचीत मे, उस दिन की सब बातें दिन की समाप्ति पर एकबारगी समाप्त कर दी जाती हैं। भीतर-ही-भीतर कौन सी बात शेष रह गई, उसे समझने का अवसर ही नही मिलता।

आज सबेरे से ही बादलो के झुण्ड मे आकाश की छाती भर उठी है। आज भी सामने दिनभर के लिए काम पडा है, और चारा ओर भीड-भाड भी है। परन्तु आज ऐसा प्रतीत होता है कि भीतर जो कुछ है, उन सबको समाप्त नही किया जा सकता।

मनुष्य ने समुद्र को पार किया, पर्वतो को लाघ डाला, पातालपुरी मे सेध लगा कर मणि-माणिक्यो को चुरा लाया, परन्तु एक व्यक्ति के हृदय की बात को, दूसरे व्यक्ति को पूणत सौप देने का काम उससे किसी भी प्रकार नही हो सका।

आज बदली के दिन सबेरे से ही, मेरी वही बन्दिनी-बात मन के भीतर अपने पख फडफडा कर मर रही है। भीतर का आदमी कह रहा है—मेरा चिर-सगी वह एक अन्य व्यक्ति कहाँ है, जो मेरे हृदय रूपी श्रावण-मेघ का कगाल बनाकर, उसकी सम्पूण वर्षा को छीन लेता है ?'

आज बदली के दिन सबेरे से ही सुन रहा हूँ—वह भीतरी बात केवल बन्द दरवाजे की साँकल का हिला रही है। सोचता हूँ—'क्या करूँ ? कौन है, जिसकी पुकार पर, कामकाज की

मेढ को लाँघ कर, इसी समय मेरी वाणी स्वर का दीपक हाथ मे लेकर ससार से अभिसार करने के लिए निकल पडे ? कौन है, जिसकी आँखो के एक सकेत से ही मेरी सवस्व त्यागिनी व्यथा, एक ही क्षण मे, एक ही आनन्द मे गुँथ जाए, एक प्रकाश से जगमगा उठे ? जो मुझसे ठीक स्वर माँग सके, मैं केवल उसी को दे सकता हूँ। वह मेरा सत्यानाशी भिखारी मार्ग के किस मोड पर है ?'

मेरे भीतरी महल की व्यथा ने आज गेरुए वस्त्र पहन लिए हैं। वह माग पर बाहर निकलना चाहती है, सब कामो से बाहर के मार्ग पर—जो माग तार के इकतरे की भाति, एकमात्र सरल है, वह किस मन के मनुष्य के चलने पर साथ साथ बज रहा है।